सबसे आगे सबसे अव्वल...
यह है
लाल-शर
(डाबर बालामृत)
की देन
विजय नहीं हासिल होती है कमजोरों को।
मिलती सदा सफलता जग में रणवीरों को॥
डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लिमिटेड कलकत्ता-२६

चन्दामामा

नवंबर १९५८

५० पैसे का फ़ायदा !
स्टॉक ख़त्म होने तक
६० पैसे वाला
बढ़िया प्लास्टिक गिलास
आपके लिए
अब केवल १० ही पैसे में
इस टिन के अन्दर
मिलता है !
Cadbury's
Bournvita
deal food drink
ngth and vigour
450g
net
Bournvita
FOR STRENGTH AND VIGOUR
शक्ति, उत्साह और
स्वाद के लिए—
केडबरीज़ बोर्नविटा !

बिस्कुट

कोको

चॉकलेट

द्वारा

दीवाली का

दुगुना आनन्द

लीजिये।

हंसने हंसाने का वह नुस्खा।

मूल्य केवल **30** पैसे

जो हकीम लुकमान लिख कर मर गये

तेज वर्ग पहेली द्वारा २००० रु० प्राप्त कीजिये

हास्य व्यंग्य कार्टून की भरपूर सामग्री–

एजेन्ट कृपया एजेन्सी के लिए लिखें।

हमारा पता—हिन्दी तेज साप्ताहिक, पो० बा० नं० १११२,
नया बाजार, देहली–६

आपका प्रत्येक क्षण हमारी दृष्टि में मूल्यवान है
पंजाब नैशनल बैंक
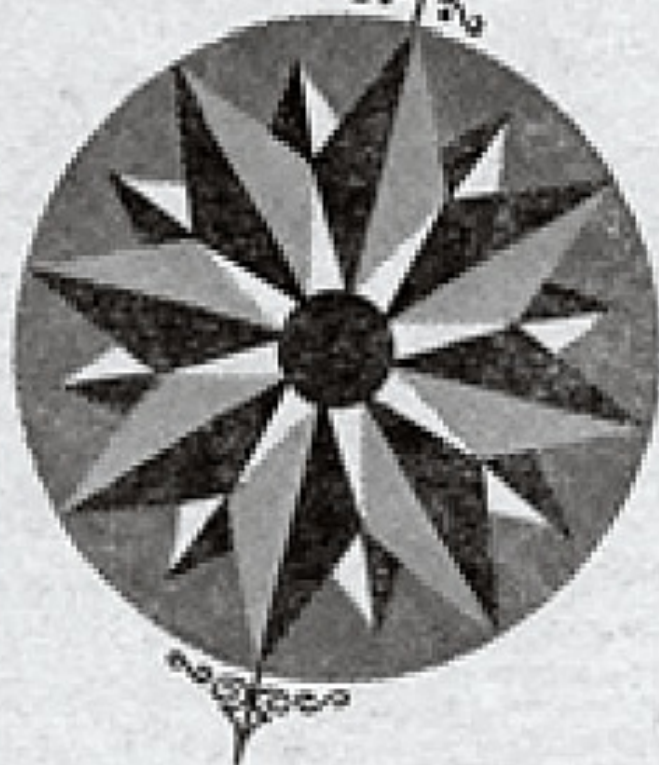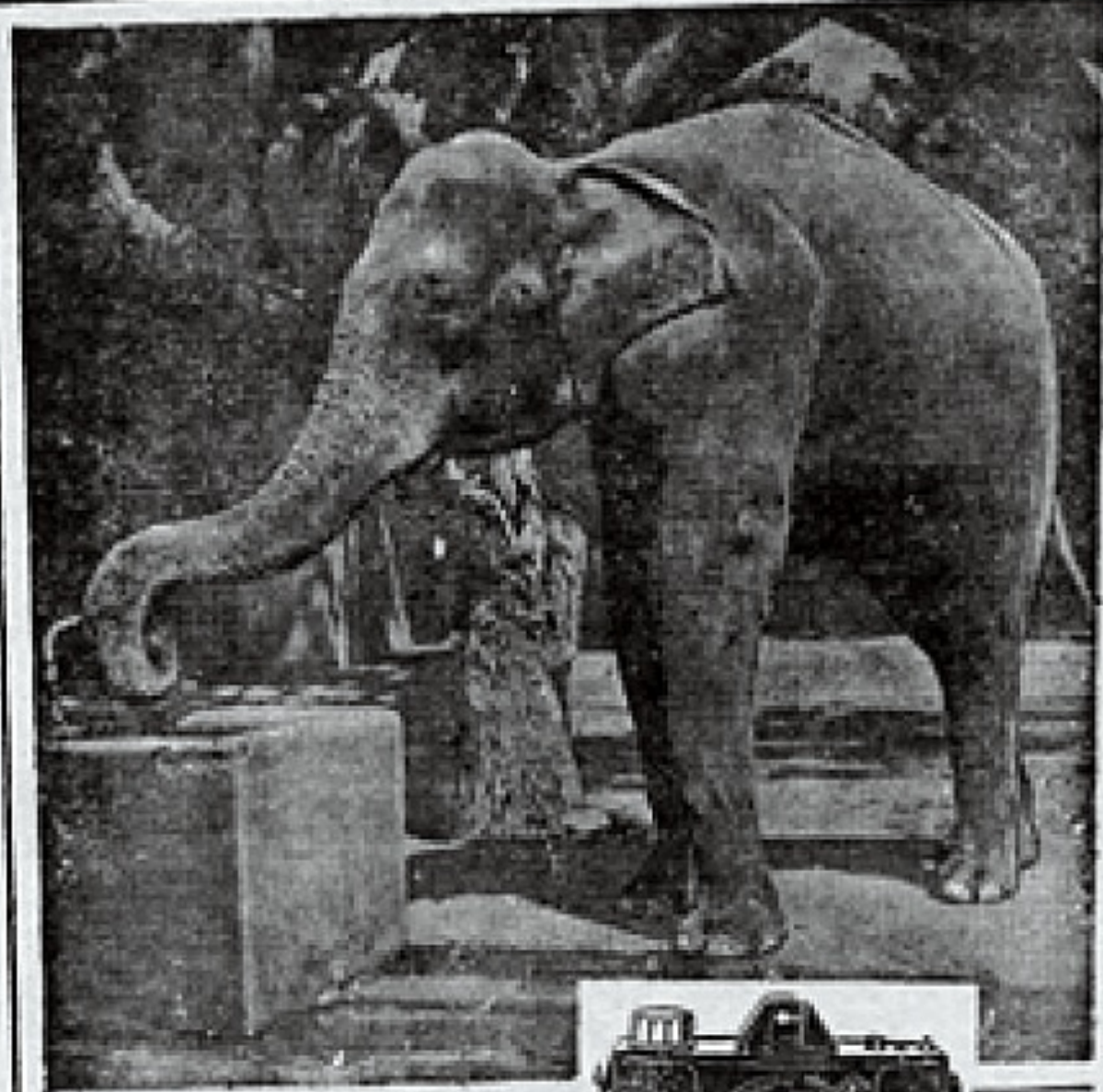
चन्दामामा
संचालक : चक्रपाणी
हमारे अनुरोध पर लेखकों ने प्रकाशनार्थ रचनाएँ भेजकर जो सहयोग दिया, उनके प्रति हम अत्यंत कृतज्ञ हैं। लेखकों से अनुरोध है कि अगर वे अपनी अस्वीकृत रचनाएँ वापस मंगवाना चाहते हैं तो जरूरी डाक टिकट भी रचना के साथ संलग्न कर भेजें, अन्यथा रचनाएँ वापस करने में हम असमर्थ हैं।
कुछ लेखक बार-बार लिखते हैं कि किस प्रकार की रचनाएँ चाहिये। चन्दामामा के स्तर की समस्त प्रकार की रचनाओं का हम स्वागत करेंगे।
वर्ष : २० नवम्बर १९६८ अंक : ३

एक समय सिक्खों ने मुगलों से चोट खाई थी; लेकिन ज्यों ही मुगलों की ताकत कमज़ोर हुई त्यों ही सिक्खों ने अपनी शक्तियों को इकट्ठा कर १७७३ तक अपना राज्य कायम किया। वह पूरब में सहारनपुर से पश्चिम में अटोक तक, दक्षिण में मुल्तान से उत्तर में कांगड़ा और जम्मू तक फैला था। वह बारह संयुक्त राज्यों के रूप में था। लेकिन सिक्खों के सामने जब दुश्मन का सवाल न रहा, तब आपस में उनकी एकता टूट गयी और उनमें भीतरी कलह पैदा हुये। एक ओर भारत ब्रिटिशवालों के अधीन होता जा रहा था तो दूसरी तरफ सिक्ख नेता अपनी एकता खोने लगे।

ऐसी हालत में उनमें जातीय भाव और एकता बढ़ानेवाला रणजीत सिंह है। रणजीतसिंह का जन्म २ नवंबर १७८० में हुआ था। उसका पिता महा सिंह सुकेर चकिया राज्य का नेता था।

१७९३ में काबुल के ज़मानशाह ने जब भारत पर हमला किया, उस वक्त रणजीत सिंह तेरह साल का लड़का था। उस समय रणजीतसिंह ने ज़मानशाह की बड़ी मदद की। इसके परिणाम स्वरूप ज़मानशाह ने रणजीतसिंह को उसकी उन्नीस साल की उम्र में लाहौर का गवर्नर बनाया और राजा की उपाधि दी।

तब से लेकर रणजीत सिंह अपनी असाधारण युद्ध-कुशलता का परिचय देते पंजाब से अफ़गानों को भगा दिया और एक ज़बर्दस्त सिक्ख राज्य स्थापित किया। साथ ही इधर-उधर बिखरे हुए सिक्खों को एक राजनैतिक संगठन के अंतर्गत लाने का परिश्रम किया। इसके लिए उसे सतलज और यमुना के बीच के समस्त

सिक्ख राज्यों को अपने अधीन में लाता रहा। ये राज्य पहले महाराष्ट्रों और बाद अंग्रेजों की छाया में रहे। इसके अलावा सिक्ख नेताओं में आपसी कलह थे।

आखिर इन्हीं कलहों से रणजीत को मदद मिली। क्योंकि वहाँ के कुछ सिक्ख नेताओं ने रणजीत से मदद माँगी। इसे बहाना बनाकर रणजीत ने सतलज नदी के तटीय राज्यों पर हमला करके १८०६ और १८०७ में लुधियाने पर अधिकार कर लिया। जो सिक्ख नेता रणजीत से ईर्ष्या करते थे उन्होंने १८०८ मार्च में दिल्ली के ब्रिटिश रेसिडेन्ट से शिकायत की।

रणजीत का यह बहाना ब्रिटिशवालों को कतई पसन्द न था; लेकिन भारत की उत्तर-पूर्वी सीमा पर स्थित एक जबर्दस्त आदमी से दुश्मनी मोल लेने से उन्हीं का नुकसान होता। अलावा इसके ब्रिटिशवालों का यह डर था कि फ्रेंचवाले तुर्क और पर्शियनों को साथ मिलाकर हमला करेंगे। यह सोचकर ब्रिटिशवालों ने रणजीत सिंह के साथ एक संधि का प्रस्ताव किया। इस संधि के पीछे ब्रिटिशवालों का यह भी उद्देश्य था कि रणजीत सिंह फ्रेंचवालों से मदद न माँगे और तुर्कों के द्वारा विजय भी प्राप्त न करें।

रणजीत सिंह ने भलीभांति समझ लिया कि उसकी मदद के बिना अंग्रेज मुसीबत में पड़ जायेंगे। उसने ब्रिटन के राजदूत को समझाया कि अगर ब्रिटन उसे समस्त सिक्ख राज्यों के अधिपति के रूप में स्वीकार करे तो वह समझौता करने को तैयार रहेगा। लेकिन इसी बीच भारत पर नेपोलियन के हमले का डर जाता रहा। टर्की और इंग्लैण्ड के बीच १८०९ में डार्डनेल्स के पास संधि हुई, फलतः उन दो देशों के बीच मैत्री स्थापित हुई।

अब ब्रिटिशवालों को रणजीत से दोस्ती करने की जरूरत न रही। उन लोगों

ने यह फ़ैसला किया कि रणजीत का राज्य सतलज के पूरब में न फैले, इसके लिए एक सेना भी भेजी। रणजीत ने अंग्रेज़ों से युद्ध नहीं करना चाहा, इसलिए उसने १८०९ अप्रैल २५ तारीख को अमृतसर में उनसे एक संधि कर ली। इसकी शर्तों के अनुसार उसने सतलज की पूर्वी दिशा में जो राज्य जीते थे, उनको त्यागना पड़ा। ब्रिटिश साम्राज्य यमुना के तट से सतलज की बायीं ओर तक फैल गया।

रणजीत ने अपने राज्य को पूरब की ओर बढ़ाने के बदले उत्तर, उत्तर-पश्चिम तथा पश्चिमी राज्यों पर हमला करना शुरू किया। १८०९-१८११ के बीच उसने गुरखों पर विजय प्राप्त करके कांगड़ा ज़िले को अपने वश में कर लिया। १८१३ में अफ़गानों को पराजित कर आटोक पर अधिकार कर लिया और अफ़गान राजा शाहशुजा से विश्व विख्यात कोहिनूर हीरे को प्राप्त किया। १८१८ में मुल्तान तथा १८१९ में कश्मीर रणजीत के अधिकार में आये। १८२३ में पेशावर को जीत लिया। १८२४ तक सिंध घाटी का अधिकांश भाग उसके हाथों में आ गया था।

अंग्रेज़ों को डर लगा कि अफ़गान उन पर हमला करेंगे, यह सोचकर रणजीत के राज्य को आड़ बनाने के ख्याल से अंग्रेज़ों ने रणजीत से १८३१ में एक समझौता किया। परंतु यह समझौता रणजीत् के प्रतिकूल ही हुआ। इसके कारण रणजीत अफ़गानों पर विजय न पा सका और सिंध राज्य को अपने राज्य में मिलाने से भी वे रोक सके। फिर भी रणजीत एक ज़बर्दस्त राज्य की स्थापना करके उसकी प्रतिष्ठा कायम रख सका। वह अपनी ५९ की अवस्था में २७ जून १८३९ को स्वर्गवासी हुआ।

जड़ी बूटी का रहस्य

कुछ साल पहले कपिशा नगर में माधव नामक एक धनी रहता था। उसका ससुराल भी संपन्न था। इसलिए वह हाथ पर हाथ धरे आराम से ज़िन्दगी-भर अपने दिन काट सकता था। लेकिन माधव वैसे चुप बैठनेवाला न था। वह रसायन विद्या में पारंगत होना चाहता था। उसने तांबे को सोना बनाने के कई प्रयोग किये। इस काम के पीछे उसने अपना सारा धन खर्च किया और गरीब हो गया।

माधव की पत्नी बड़ी विवेकशील थी। उसने पहले ही समझ लिया था कि उसका पति सोने के पीछे पागल हो, अपनी सारी जायदाद खतम कर देगा। इसलिए उसने गृहस्थी के निर्वाह में बड़ी दिलचस्पी दिखायी। लेकिन उसकी सारी मेहनत बेकार हो गयी। दूसरों की भांति उसका पति भी कोई व्यापार करता तो सुधर जाता। सोने के पीछे पागल माधव के दिमाग में पत्नी की चेतावनियाँ असर न कर पायीं; उल्टे सारी जायदाद एक तरफ़ कपूर की भांति उड़ती जा रही थी। वह अपनी पत्नी से बराबर यही कहता, जल्दी न मचाओ। सोना बनाने की विद्या बहुत-कुछ हाथ लग गयी है। अब थोड़ी-सी कसर रह गयी।

माधव की पत्नी की हालत बड़ी खराब होती गयी। उसने अपने मायके में जाकर अपने पिता से गृहस्थी के बारे में सारी बातें बतायीं। इस पर उसने अपनी बेटी से कहा—"मैं दामाद से बात करूँगा। तुम घबराओ नहीं; वह संभल जायगा।"

ससुर का निमंत्रण पाकर माधव ससुराल पहुँचा।

कुबेरनाथ राय

"क्यों, तुम्हारी रसायन-विद्या कहाँ तक आयी है?" ससुर ने पूछा।

माधव ने उत्साह में आकर उसने जो जो प्रयोग किये थे, सबका विवरण कह सुनाया।

"अरे! तुमने असली बात भूलकर कई साल बरबाद कर दिये! तुमको मेरी सलाह कभी लेनी थी। मैं ने भी इस विद्या के बारे में बहुत कुछ अध्ययन किया और सोच-समझ लिया है। मैं अब भी कह नहीं सकता कि तुम्हारा काम आसान है। तुमको कई साल सहनशीलता के साथ यह काम करना होगा। मैं बूढ़ा हो गया हूँ। मैं मेहनत भी न कर सकता। यह काम तुमसे ही बनेगा। इसलिए मैं इसके संबन्ध में जो रहस्य जानता हूँ, वे तुम्हें बता देता हूँ। मेरे कहे अनुसार करते जाओ तो तुम्हारी इच्छा की पूर्ति होगी।" ससुर ने समझाया।

माधव ने बड़े ही भक्तिभाव से कहा—"ससुरजी! आपके कहे अनुसार बड़ी श्रद्धापूर्वक यह काम करूँगा। विजय के मिलने तक नहीं छोड़ूँगा।"

"तुम आज तक तांबे को सोना बनाने की कोशिश में लगे थे न? इस के लिए आवश्यक सारी सामग्री मेरे पास है। सिवाय एक वस्तु के। तुम्हारी सहनशीलता की जाँच करके अधिक श्रम देनेवाली चीज़ ही यही है। परंतु इसको प्राप्त करना असंभव नहीं है।" ससुर ने कहा।

"ससुरजी! वह वस्तु क्या है? बताइये!" माधव ने पूछा।

"वैसे कोई खास बात नहीं! केले के पत्तों पर जो रोंगुर होता है, उसे देखा है न? उसे लगभग पौन बोरा इकट्ठा करना होगा। उसमें तकलीफ यह है कि उस रोंगुरवाले पौधों को तुम्हें खुद अपने हाथों से मंत्र पढ़ते उन पौधों को रोपना

होगा। वह मंत्र मैं तुमको सिखाऊँगा।" ससुर ने कहा।

"कई पौधों को रोपना होगा न?" माधव ने पूछा।

"इसमें क्या संदेह है? कई एकड़ बाग लगाना होगा, नहीं तो पौन बीसा सींगुर तुम्हें कहाँ से मिलेगा?" ससुर ने कहा।

खेत खरीदकर केले के बाग लगाने में ससुर ने माधव की मदद दी। मज़दूरों ने ज़मीन समतल करके केले के पौधे लगाने के लिए गड्ढे खोदे। माधव ने ससुर के कहे मुताबिक मंत्र पढ़ते केले के पौधे खुद रोपे। माधव की पत्नी ने भी इस काम में बड़ी दिलचस्पी दिखायी।

पौधे बड़े हो गये। माधव दिन-भर बाग में घूमता, हर पत्ते से सींगुर इकट्ठा करता। दो-तीन दिन बाद उस सींगुर को तौलकर देखता तो उसके ससुर की बातें सच मालूम होतीं। जल्द-बाज़ी करने से कोई फायदा नहीं। इस तरह पौन बीसा सींगुर इकट्ठा करने में काफी समय लगेगा। सहनशीलता भी चाहिए।

माधव की दृष्टि केले के पत्तों पर स्थित सींगुर पर थी। उसकी पत्नी रोज़ केले के पत्ते, गोंद और फूल बेचकर काफी धन इकट्ठा करने लगी। माधव का ध्यान बिलकुल इस ओर न गया। वह हमेशा यही सोचा करता कि कब पौन बीसा सींगुर होगा और कब तांबे को सोना बना सकूँगा।

तीन साल बीत गये; परन्तु माधव का सपना पूरा होता दिखाई न दिया। उसकी पत्नी बगीचे के द्वारा जो व्यापार करती थी वह खूब चमक गया। गाड़ियाँ भर-भरकर केले, और पत्ते दूर-दूर के बाज़ारों में बिकने के लिए जाते थे। उस प्रदेश में उसकी तुलना करनेवाला कोई बगीचा न था।

और दो साल बीत गये। माधव अपने काम में कामयाब हुआ। उसने पाँच बोरा सींगुर इकट्ठा किया था। उसने उसे अपने ससुर के सामने रखते हुए कहा—"लीजिये! आपके कहे मुताबिक मैं ने सींगुर इकट्ठा किया।"

"शाहबाश! अब तुम्हें पैसे की कमी न रहेगी।" यह कहते ससुर हँस पड़ा। फिर अपनी बेटी की ओर मुड़कर पूछा—"बेटी! केले के बगीचे से तुमने कितने रुपये कमाये?"

माधव की पत्नी रुपयों की थैली ले आयी और बोली—"आप ही हिसाब कीजिये।"

माधव की समझ में यह बात न आयी कि केले के बगीचे से कमाई कैसे? वह केवल सींगुर की बात ही सोचा करता था।

ससुर ने थैली से रुपये नीचे गिराये और गिनकर कहा—"बीस हजार रुपये!" उस धन को देख माधव आश्चर्य चकित रह गया।

"मेरी सलाह कैसे काम दे गयी? तुम चाहो तो इस चाँदी से खरा सोना खरीद सकते हो, गहने बना सकते हो, जो चाहो खरीद सकते हो। यह मान जाओगे न? गत पाँच साल मैं ने तुमसे जो मेहनत करायी उसका फल मिल गया। तुमने जो रासायनिक प्रयोग किये उनसे यह प्रयोग अच्छा है न?" ससुर ने कहा।

माधव की आँखें खुल गयीं। ससुर ने भले ही उसे धोखा दिया हो, पर अच्छा सबक सिखाया। उसे बड़ा लाभ ही हुआ। कामधेनु जैसे बगीचे के होते उसे पैसे की क्या कमी है? उसने अपने ससुर से क्षमा माँगी और उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की। इसके बाद वह बगीचे की देखभाल करते आराम से दिन काटने लगा।

के पुजारी के मंत्र को! तुम्हारे बाप ने उस बदमाश की बातों पर यकीन करके हमसे दुश्मनी मोल ली।"

इसपर नागमल्ली ने क्रोध पूर्ण स्वर में कहा—"तुम्हारे शबर अक्लमंद हैं और हमारे शबर बेवकूफ हैं। यही कहते हो न! मैं कहती हूँ कि सब बेवकूफ हैं। असल में जान-बूझकर तुम्हारी जाति के लोगों ने हम से दुश्मनी मोल ली। मेरे बाबूजी की बात..." कुछ कहने जा रही थी कि इतने में वह आदमी धम्म से नीचे गिर पड़ा। उसकी कमर में बंधा रस्सा टूट गया।

जमीन पर गिरे पक्षी-मानव को शिखिमुखी और नागमल्ली ने हिलाकर देखा। लेकिन वह थोड़ी देर तक शव की तरह निश्चल पड़ा रहा, फिर अचानक प्राण पाने का अभिनय करते उछलकर खड़ा हो गया और जोर से चिल्ला पड़ा—"पुजारी देवता की जय!"

"मैं क्रौंच की जाति का पक्षी हूँ। आसमान पर उड़ सकता हूँ। सारी दुनियाँ का मिनटों में चक्कर लगाकर लौट सकता हूँ। यह सब उस पुजारी देवता का वरदान है।" यह कहते वह इस तरह झूमने लगा, मानो उस पर भूत का सवार हुआ हो।

"यह बहुत पिया हुआ मालूम होता है। नशे में रहते वह पुजारी का संदेश हमको कैसे सुना सकता है?" यह कहते शिखिमुखी ने उसके कंधे पकड़कर झकझोर दिया और जोर से धक्का दिया। वह एक पेड़ से जा टकराया। फिर कराहने लगा।

तब तक नागमल्ली इस दृश्य को एक-टक देख रही थी। झट उसने उसके बायें कंधे में भाला चुभो दिया और कहा—"तुम शबर जाति के हो न? क्या तुम सरदार [illegible] को जानते हो?"

बनोगे! तब सारी बातें बता दोगे।" यह कहते शिखी ने एक लात मारी।

शिखिमुखी ने उस नीच मानव को पाँच-छे बार पानी में डुबोया तो उसका दम घुटने लगा। वह डर के मारे काँपते हुए बोला—"मुझे मार न डालो, तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ। पुजारी का संदेश सुनिये। उस तस्वीर को देखिये। महारानीजी कहाँ? मुझे बचाओ, महारानीजी, मुझे बचाओ।"

तालाब के किनारे पर खड़ी होकर यह दृश्य देखनेवाली नागमल्ली ठठाकर हँस पड़ी और बोली—"शिखी, उसको न मारो। तुम्हारे इलाज से उसकी रही-सही अक्ल भी जाती रही। उठाकर किनारे पर डाल दो।"

नागमल्ली की बातों से शिखी का क्रोध थोड़ा शांत हो गया। उस नीच मानव के बाल पकड़कर जोर से एक बार डुबोया। फिर बाहर निकालकर किनारे पटक दिया। वह हाँफते हुए उठ बैठा और बोला—"मुझ पर रहम खाओ, भैया! आकाश में बड़ी दूर तक उड़ आया, इसलिए थकावट के मारे कुछ भूल गया। मुझे माफ कर दो।"

"तस्वीर की बात कहो! कहाँ है?" शिखिमुखी ने पूछा।

"भूल गया, महाराज!" यह कहते उसने अपने कपड़ों में से गोल चमड़े में लपेटी एक वस्तु को निकाला, फिर बोला—"यह बर्फीली हिरन का चमड़ा है। इसे खोलकर देखिये। आपके राज्य की सीमाएँ, पहाड़, नदियाँ और जंगल सब दिखाई पड़ेंगे। आप दोनों जल्द रवाना हो जाइये। पुजारी देवता के पास ले जाऊँगा। इसके बाद वे हम सब को आसमान के रास्ते पर ब्रह्मपुत्र नदी की घाटियों में उठा ले जायेंगे।" बर्बर नीच ने कहा।

शिखिमुखी और नागमल्ली ने उस की बातों पर कोई ध्यान न दिया। वे उस गोल चमड़े में लपेटे हिरन के चमड़े में अंकित अपूर्व दृश्यों को तन्मय हो देखती रहीं। उस में एक जगह हिमालय का चित्र अंकित था। उसके बाजू में एक महानदी, पहाड़, और जंगल थे। दूर पर बर्फ से ढंके हिमालय पहाड़ सुशोभित थे। शिखिमुखी और नागमल्ली उन दृश्यों को देखते-अपने को भूल से गये। लगता था कि कोई अदृश्य शक्ति उनको उन प्रदेशों में आने का आवाहन कर रही हो।

"शिखी! हम इस तस्वीर में चित्रित हिमालय के प्रांतों में एक बार हो आयेंगे! पुजारी जो राजा-रानी की बात कहता है, उस पर तो मैं यकीन नहीं करती, लेकिन यूं ही एक बार उसके साथ जाकर इन अद्भुत पहाड़ों को देख आयेंगे।" नागमल्ली ने कहा।

शिखिमुखी ने नागमल्ली की आँखों में देखा। नागमल्ली अपनी आँखें विस्फारित करके, हिरन के चमड़े पर अंकित दृश्यों को देखती आनंद के सागर में डुबकियाँ लगा रही है। शिखिमुखी ने अनुभव किया कि कोई खतरा पैदा होनेवाला है। उसने भौंहें चढ़ाकर, सर हिलाते हुए नागमल्ली के कंधे पर हाथ रखा और पूछा—"लगता है, तुम इस दुनिया में नहीं हो? या नहीं तो हिमालय के पुजारी के मंत्र के प्रभाव में आ गयी हो?"

शिखिमुखी का यह प्रश्न सुनकर नागमल्ली चौंक पड़ी—"सचमुच तेरी तरह लगता है कि मेरी बुद्धि भी भ्रष्ट हो गयी है। नहीं तो उस दुष्ट के साथ ब्रह्मपुत्र की नदी की घाटियों में जाने का क्या मतलब है?" अपनी बातों पर दुखी होते हुए बोली।

"मैं भी यही पूछने जा रहा था। वह हमारा दुश्मन है..." यह कहकर शिखिमुखी ने शबर गीध की ओर देखा—"तुम यहीं ठहर जाओ! हम दोनों तुम्हारे साथ पुजारी देवता के पास आ जायेंगे।"

फिर शिखिमुखी नागमल्ली को थोड़ी दूर ले गया और उससे बोला—"शिखिनालय के पुजारी को पकड़ने का यह एक अच्छा मौका है। उसने इस प्रदेश में जो अत्याचार किये, उनकी कोई गिनती नहीं। क्या शबर गीध की बातों पर यकीन करने का अभिनय करके पुजारी के पास चले जायें? एक बार हमने उसको देख लिया तो फिर उसे पकड़ने में कोई तकलीफ न होगी!"

नागमल्ली ने बड़ी खुशी से शिखी की बातों को मान लिया। फिर वे दोनों शबर गीध के पास पहुँचे और बोले—"चलो, अब तुम्हारे पुजारी देवता के पास जायेंगे!"

शबर गीध उनकी बातें सुनकर, खुशी से नाच उठा—"चलिये, मुझे इस से बढ़कर खुशी का और क्या कारण हो सकता है! हमारे होनेवाले महाराज और महारानी का पुजारी देव को परिचय कराने में मुझे बड़ा आनंद होगा! राज्य मिलने के बाद इस शबर गीध की मेहरबानी करके न भूलियेगा।" यह कहकर तेज़ी से होकर पहाड़ पर चढ़ने लगा।

वह प्रदेश घने वृक्षों से घिरा हुआ है, ऊँचा पहाड़ है, पर उस पर चढ़ने के लिए एक पगडंडी तक नहीं है। फिर भी शबर गीध इस तरह आगे बढ़ता था, मानों वह सारा प्रदेश उस के लिए सुपरिचित है। शिखिमुखी और नागमल्ली चौकन्ने हो हथियारों को संभाले उसके पीछे चल रहे थे।

पंद्रह मिनट बीते। तब तक वे पहाड़ पर बहुत दूर चढ़ चुके थे। शबर गीध

परीक्षा

हठी विक्रमादित्य हमेशा की भाँति पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–

"राजन, तुम्हारी सहनशीलता असाधारण है। तुम जो श्रम कर रहे हो, उसमें चौथाई हिस्सा भी श्रम किये बिना परीक्षा में सफल होकर चंद्रपाल ने कांतिपुर के सिंहासन को प्राप्त किया है। तुमको श्रम भुलाने के लिए मैं चंद्रपाल की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।"

बेताल यों कहने लगा–

कांतिपुर के राजा कालकंठ के सूर्यपाल और चंद्रपाल नामक दो बेटे थे। राजा कालकंठ ने उचित समय पर उन दोनों को शिक्षा दिलाने के लिए राजगुरु के पास भेजा। उन्होंने गुरु से सब प्रकार की शिक्षाएँ प्राप्त कीं।

वेताल कथाएँ

राजकुमारों की शिक्षा के पूरा होते ही राजा ने गुरु का राजमहल में स्वागत करके उनका सम्मान किया और अपने पुत्रों की पढ़ाई के बारे में पूछा।

"महाराज, आप जल्द ही बड़े पुत्र का युवराज के रूप में अभिषेक करने जा रहे हैं। गुरु के नाते मेरा विचार यह है, बड़ा पुत्र राज्य के योग्य नहीं है, दूसरा ही इसके लिए सब तरह से योग्य है।" राजगुरु ने कहा।

राजा ने चकित होकर पूछा—"गुरुदेव! आप यह क्या कहते हैं? बड़े पुत्र को छोड़कर छोटे को युवराज बनाना नियम के विरुद्ध है और यह परंपरा भी अच्छी नहीं है।"

"मैं यह नहीं जानता, महाराज! नियम और परंपरा का पालन करने की अपेक्षा राज्य का हित देखना हम लोगों का प्रधान कर्तव्य होना चाहिये। सूर्यपाल के शासन की अपेक्षा चंद्रपाल के शासन में राज्य का अच्छा विकास होगा, यह मेरा दृढ़ विश्वास है। सूर्यपाल स्वभाव से अहंकारी है और दूरदर्शी नहीं है। साथ ही वह साहसी भी नहीं। चंद्रपाल में ये कमियाँ नहीं हैं।" राजगुरु ने यह समझाया।

"आपका कहना सत्य है तो मेरे विचार से उन दोनों की परीक्षा लेना उत्तम होगा।" राजा ने कहा।

"विशेष रूप से उनकी परीक्षा लेने की जरूरत नहीं। दोनों को कुछ समय तक देशाटन के लिए भेजिये। लौटकर वे जब अपने अनुभव सुनाएँगे तब हम निर्णय कर सकते हैं कि कौन, कैसा है!" राजगुरु ने कहा।

गुरु को विदा कर राजा ने अपने पुत्रों को बुलाया और कहा—"तुम्हारी पढ़ाई पूरी हो गयी है। तुममें से बड़े को मैं

युवराज के रूप में अभिषेक करना चाहता था; लेकिन आज तक तुम्हारे गुरु और पिता के रूप में रहनेवाले राजगुरु ने मुझे यह सलाह दी है कि मैं इस बात में जल्द-बाजी न करूँ और एक सप्ताह तक तुम दोनों को देशाटन पर भेजूँ, लौटने पर तुम्हारे अनुभव सुनकर मैं युवराज बनाने का निश्चय करूँ। मैंने उस पूज्य व्यक्ति की सलाह के अनुसार करना चाहा। इसलिए तुम दोनों आज ही यहाँ से रवाना होकर ठीक एक सप्ताह तक देशाटन कर लौटो।"

यह बात सुनकर सूर्यपाल रोष में आकर बोला—"गुरुजी को शायद मेरा राज्याभिषेक करना पसंद नहीं है; इसलिए उन्होंने यह बात कही होगी। सब तरह से युवराज मुझे ही बनाना चाहिए। इसके विरुद्ध कदापि कुछ न हो ही सकता।"

चंद्रपाल ने अपने भाई का समर्थन किया। उसने अपने पिता से कहा—"आप की आज्ञा हो तो हम दोनों एक सप्ताह तक देशाटन कर लौटेंगे। लेकिन आपके अनंतर भाई ही राजा बन सकता है। मुझे राजा बनने का कोई अधिकार नहीं है।"

यह बात सुनकर सूर्यपाल बहुत संतुष्ट हुआ।

उसी दिन दोनों भाई पैदल एक साथ देशाटन करने निकले।

कई रात गये दोनों एक नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ पर उन दोनों ने देखा—केवट अपनी नाव में सो रहा है। राजकुमारों ने उसे जगाया और नाव द्वारा नदी पार की।

"मैंने इस आधी रात के समय नाव चलायी। कुछ इनाम दीजिये!" केवट ने पूछा।

दुर्गपाल ने केवट की ओर क्रोध भरी दृष्टि से देखते हुए कहा—"क्यों रे? मुझे कौन समझ रखा है? इस देश का युवराज हूँ! मुझसे इनाम माँग रहे हो? खबरदार! सोच-समझकर आइंदा व्यवहार करो, वरना तुम्हारा चमड़ा उधेड़ दूँगा।"

उसके पीछे नाव उतरनेवाले भद्रपाल ने केवट के हाथ में बिना कुछ बोले-चाले चुपचाप एक अशर्फी रख दी।

दूसरे दिन दोनों राजकुमार एक पहाड़ से होकर गुज़र रहे थे। ऊपर से एक चट्टान लुढ़कते-लुढ़कते उनकी ओर आने लगी।

"बाप रे बाप!" कहते दुर्गपाल चिल्ला उठा।

चट्टान जिस ओर से लुढ़क रही थी वहाँ पर एक विशालकाय व्यक्ति पैदल चला जा रहा था, उसने बड़ी हिम्मत के साथ अपनी सारी ताकत लगाकर चट्टान को दूसरी तरफ ढकेल दिया। राजकुमार बाल-बाल बच गये।

दुर्गपाल ने उस विशालकाय व्यक्ति को अपने पास बुलाकर कहा—"जानते हो? आज तुमने किन के प्राण बचाये? मैं इस देश का युवराज हूँ। होनेवाला राजा हूँ। तुम्हारी भावी पीढ़ी के लोग गर्व के साथ यह कहेंगे कि उनके पुरखों ने अमुक राजा के प्राण बचाये। समाज में तुम्हारा

बड़ा बस होगा।" यह कहकर सूर्यपाल आगे बढ़ा।

चन्द्रपाल ने उस विशालकाय व्यक्ति का परिचय पूछा और यह जानकर कि वह बड़ी गरीबी में दिन काट रहा है, उससे कहा—"तुम जैसे हिम्मतवरों को इन पहाड़ों के बीच जानवरों की तरह दिन काटना मुझे अच्छा नहीं लगता। मेरे साथ चलकर क्या मेरे अंगरक्षक की नौकरी करोगे?"

वह विशालकाय व्यक्ति बहुत खुश हुआ और चंद्रपाल के साथ निकला। चंद्रपाल ने अपने भाई से मिलकर यह सूचना दी कि उसने विशालकाय व्यक्ति को अपना अंगरक्षक बनाया है।

"क्या, इसीलिए? उसने हमारे प्राणों की रक्षा करके अपना कर्तव्य निभाया है। इसका प्रत्युपकार करना अनावश्यक है।" सूर्यपाल ने कहा।

"मैंने यह बात नहीं सोची। पहाड़ पर से लुढ़कनेवाली चट्टान को ढकेलने के लिए कितनी हिम्मत और कितनी ताकत की जरूरत होती है। यह तुमने सोचा? यह सोचकर उसने हमारी रक्षा नहीं की कि हम राजकुमार हैं। मैं जो कर रहा हूँ, वह प्रत्युपकार नहीं है। ऐसे हिम्मतवर

और ताकतवर का ऐसे अंगरक्षक के रूप में रहना मेरा ही उपकार है। मैं नहीं समझता कि सौ साल दुनिया-भर में ढूँढ़े तो भी मुझे ऐसे अंगरक्षक का मिलना मुश्किल है।" चंद्रपाल ने कहा।

तब तक सूर्यपाल को उस विशालकाय की ताकत और हिम्मत की बात समझ में न आयी, पहले यह बात मालूम होती तो वही उसको अपना अंगरक्षक बना लेता। अब मौका हाथ से निकल चुका था। वह मन ही मन अपनी नासमझी पर पछताने लगा।

कुछ समय बाद वे एक जंगल में पहुँचे। थोड़ी दूर और आगे बढ़ने के बाद उन्हें दूर पर एक सिंह दिखाई पड़ा। उसे देखते ही सूर्यपाल ने अपने बाण उसपर छोड़े। उनमें अधिकांश बाण बेकार हो गये। एक-दो बाण लग भी गये, लेकिन उनकी परवाह किये बिना सिंह धीरे से चलते राजकुमारों की ओर आया।

सूर्यपाल घबराकर भाग खड़ा हुआ।

चंद्रपाल वहीं खड़े हो, बड़ी सावधानी से सिंह को देखने लगा। वह न गर्जन करता था और न उसमें किसी प्रकार के विकार ही थे। वह चंद्रपाल के सामने आकर खड़ा हो गया। उसने झुककर उसके शरीर में घुसे बाणों को निकाला और घावों को सहलाने लगा। सिंह कृतज्ञता दिखाते उसके हाथ चाटने लगा।

"यह सिंह हमारा ही है, साहब! साथ ले चलें?" विशालकाय ने कहा।

विशाल काय व्यक्ति का आदेश पाकर वह सिंह चंद्रपाल के पीछे कुत्ते की तरह चलने लगा।

सिंह को देखकर सूर्यपाल भागते-भागते एक घड़ी पहले घर पहुँचा और अपना अनुभव राजा को सुनाते हुए बोला—"छोटे भाई को मेरी ही भाँति तुरंत भाग आना चाहिए था। सिंह ने उसे और उसके

अंगरक्षक को वश किया होगा। मैंने सोचा था कि मेरे अभिषेक के समय वह जरूर मेरे साथ रहेगा।" यह कहकर उसने झूठी सहानुभूति जताते गहरी साँस ली।

थोड़ी ही देर में चन्द्रपाल अपने अंगरक्षक और सिंह के साथ राजमहल में आ पहुँचा। सूर्यपाल को लगा कि वह सिंह उसकी ओर घूर रहा है, वह घबराकर भाग गया।

राजा ने अपने दोनों पुत्रों को बुलाकर जब राज्याभिषेक का प्रस्ताव रखा, तब सूर्यपाल ने झट कह दिया–"छोटे भाई को ही युवराज बना दीजिये।" सूर्यपाल की इच्छा के अनुसार ही चन्द्रपाल का युवराज के रूप में अभिषेक किया गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन्! अहंकारी सूर्यपाल ने खुद अपने छोटे भाई को राज्य देने की स्वीकृति क्यों दी? क्या इसलिए कि उसके पास बलवान अंगरक्षक और एक सिंह है! इस शंका का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इसपर विक्रमादित्य ने कहा–"सूर्यपाल के सिंहासन छोड़ने का मूल कारण यह नहीं है। सिंह को देख, उसके भागने की बात राजभवन में सबको मालूम हो गयी थी। इस कलंक को लेकर वह राजभवन में किसी को प्रभावित नहीं कर सकता था। जब वह राजा बनेगा तब उसका भाई प्रजा में एक होगा। वही उस सिंह को साथ लाता है। राजा अपने से भी हिम्मतवर पर कभी अधिकार चला नहीं सकता; इसीलिए सूर्यपाल को राजगद्दी विवश होकर त्यागनी पड़ी।"

राजा के इस तरह मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो, पेड़ पर जा बैठा।

चार पिशाच

एक गाँव के किनारे एक पुरानी सराय थी। उसके बारे में लोगों का यह अंध-विश्वास था कि उसमें पिशाच होते हैं और रात के समय कोई उस सराय में पहुँचे तो उसे मार डालते हैं।

उसी गाँव में एक अफ़ीमची था। वह अफ़ीम खाते हमेशा मस्त रहा करता था। उसे किसी बात की चिंता न थी। जब अफ़ीम खरीदने के लिए पैसों की कमी होती तभी वह कोई मज़दूरी करता। मज़दूरी के मिलते ही उन पैसों से वह अफ़ीम खरीद लेता और मस्ती में घूमता रहता।

एक दिन शाम के वक्त, उसका अफ़ीम समाप्त हो गया। अफ़ीम खरीदने के लिए पास में पैसे न थे। कुछ करते भी न बनता था, क्योंकि वह शाम का समय था। इसलिए वह सब लोगों के पास पहुँचकर कहने लगा कि 'मुझे थोड़ा अफ़ीम दिला दीजिये। आप लोग जो कहें सो करूँगा।'

किसीने उसकी बात न सुनी। लेकिन कुछ युवकों को मज़ाक सूझा। इसलिए उन्होंने उसे तंग करने के ख्याल से कहा—"अरे भाई, तुम आज की रात इस सराय में बिता दोगे तो तुमको अफ़ीम के साथ खाना भी खिलवा देंगे।"

अफ़ीम दे तो वह उस रात को नरक में भी बिताने को कहे तो बिताने को तैयार हो गया।

युवक आपस में हँस पड़े और अफ़ीम के साथ खाना की पोटली बाँधकर उसके हाथ में युवकों ने रख दी। इसके बाद अफ़ीमची को युवक सराय तक ले गये और उसे अन्दर भेजकर अपने अपने रास्ते चले गये।

कुमारी सुरेखा

दुर्भाग्य की बात थी कि अफ़ीमची के मुँह से जो नाम निकले, वे ही उन पिशाचों के नाम थे। वे पिशाच आपस में एक दूसरे को इन्हीं नामों से पुकारा करते थे।

अफ़ीमची की बातें सुनकर पिशाच सब घबरा गये।

"यह मामूली आदमी नहीं है। मामूली आदमी होता तो इस सराय में रात के वक्त आने की हिम्मत नहीं करता। अलावा इसके यह जाग जाता है। हमारे नाम भी जानता है। यह हमको खाने के लिए आया हुआ है। इस से दोस्ती करनी है, नहीं तो हम खतरे में पड़ जायेंगे।" पिशाचों ने यह निश्चय किया। वे जानते थे कि सोना कहाँ पर छिपा रखा हुआ है। इसलिए वहाँ जाकर सभी पिशाच सोना खोद लाये और अफ़ीमची के सामने ढेर लगाकर बोले—"ले लो, भैया! हमको छोड़ दो! तुम्हारे पैरों पड़ते हैं।"

अफ़ीमची ने धीरे से आँखें खोलकर देखा। उसने सोचा कि कोई उसका खाना खरीदने के लिए सोना देना चाहता है। यह सोचकर बोला—"ऐसा नहीं हो सकता. मुझे ज़ोर की भूख लगी है। मुझे खाना ही चाहिये।"

पिशाच सब और घबरा गये। वे इस सोने के ढेर को वहीं छोड़कर भाग खड़े हुए। वे कहाँ तक भागते गये, कोई नहीं जानता। फिर लौटकर नहीं आये। इसके बाद फिर किसीने उस सराय में पिशाचों को नहीं देखा। अफ़ीमची वह सोना लेकर घर पहुँचा। वह ज़िन्दगी-भर अफ़ीम खाते मज़े में मस्ती के साथ दिन गुज़ारने लगा और उसे फिर कभी दूसरों के सामने हाथ फैलाने की ज़रूरत न पड़ी।

अद्भुत इंद्रजाल

एक समय नागपाल नामक एक पांचाल जिले का राजा राज्य करता था। वह अपने मंत्री और हितैषियों की सलाहों की परवाह नहीं करता था। मनमाने ढंग से राज-काज करता था। उसकी आज्ञाओं का पालन करने में मंत्री देवराज बड़ा परेशान था। क्यों कि नागपाल की इच्छाएँ और आज्ञाएँ बड़ी अजीब होती थीं। बल्कि यह कहना ज्यादा अच्छा होगा कि इनका पालन करना नामुमकिन था।

देवराज बड़ा मेधावी, ज्ञानी और बहुमुखी शास्त्रों का ज्ञाता था, इसलिए नागपाल को किसी न किसी तरह संभाल लेता था। राजा का प्रधान अंग-रक्षक जिवसेन देवराज का बड़ा समर्थक और सहायक भी था। इसीलिए राजा की विचित्र कामनाओं की पूर्ति करने में वह मन लगाकर देवराज की मदद करता था।

एक दिन राजा ने मंत्री को शेर का दूध लाने का आदेश दिया। इस पर जिवसेन आठ सौ भटों के साथ जंगलों में गया, एक ऐसी शेरनी की तीन दिन और तीन रातों में खोज की जिसने अभी अभी बच्चे दिये थे। आखिर शेरनी को एक जाल में फँसाकर ले आया। उसके पैर व मुँह को कसकर रस्सों से बँधवा दिया और राजा के सामने मंत्री ने शेर का दूध दुहवाया।

एक दिन राजा ने मंत्री को बुला भेजा और आज्ञा दी—"मैंने पिछली रात को एक अजीब सपना देखा। सपने में एक योगी राजभवन में आया। उसने मुझे एक अनोखी चीज दिखायी। वह यह कि रात के समय में एक अंगूठी लटक रही है,

पी. सी. सरकार

लेकिन धागा नहीं टूटा और न अंगूठी नीचे गिरी। यह सपना ज़रूर था, लेकिन मैं इस सपने को दिन के वक्त अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखना चाहता हूँ। तुम तीन दिन के अंदर इसका इंतज़ाम करो, वरना तुम्हारा सर कटवा दूँगा।"

देवराज बड़ी चिंता में पड़ गया। उसे उस रात को नींद नहीं आयी। सवेरा हुआ। राजा की इच्छा की पूर्ति करने में अब केवल दो दिन बच रहे। इस बीच में राजा की इच्छा पूरी न करे तो उसका सर काटा जाएगा। लेकिन देवराज के मन में कोई उपाय न सूझ रहा था।

दूसरे दिन दुपहर को मंत्री के मन में हठात् एक विचार आया। राजा की इच्छा पूरी करने के लिए इंद्रजाल के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है। इसलिए उसने इंद्रजाल की एक पुस्तक निकालकर उसके पन्ने उलटना शुरू किया। जल्द ही उसे आवश्यक उपाय सूझ पड़ा।

उसने शाम के अंदर आवश्यक सब इंतज़ाम किये और दूसरे दिन एक योगी को साथ लेकर मंत्री दरबार में पहुँचा।

"महाराज, ये मौनानंद स्वामीजी हैं। ये बोलते-चालते नहीं। आपने जो चीज़ सपने में देखी, उसे ये आपको प्रत्यक्ष दिखा देंगे। कृपया आप उनसे और कुछ न चाहियेगा।" देवराज ने राजा नागपाल से बड़ी विनय के साथ निवेदन किया।

राजा ने यह बात मान ली। योगी ने खड़े हो कर एक धागा निकाला। उसके एक सिरे को लकड़ी से बाँधा और धागे के दूसरे सिरे पर एक अंगूठी बाँध दी।

योगी का संकेत पाते ही देवराज ने धागे को जलाया। दरबारियों के देखते-देखते धागा जलकर खाक हो गया, लेकिन धागा वैसे ही लटकता रहा। अंगूठी भी गिरी नहीं।

राजा और दरबारियों ने उत्साह में आकर हर्षनाद किये। राजा ने योगी को अच्छे इनाम देकर भेज दिया। देवराज भी बाल-बाल बच गया।

उस दिन दुपहर को शिवसेन ने देवराज के घर पहुँच कर पूछा—"मैंने इंद्रजाल ठीक से किया है न?"

देवराज ने हँसकर कहा—"तुमने बड़ा अच्छा किया। इसीलिए हम अभी जीवित हैं। योगी के वेश में तुमको किसीने नहीं पहचाना।"

"यह जादू करने के पहले आपने धागे को नमकीले पानी में कितनी बार डुबो कर सुखाया?" शिवसेन ने पूछा।

"तीन बार ही। पानी में नमक ज्यादा मिलाया। उसमें धागे को भिगोकर सुखा दिया। इस तरह तीन बार करने के कारण धागे को जलाने पर भी वह अपने आकार को बचा सका और बड़ी आसानी से अंगूठी को ढो सका। हमारी किस्मत जबर्दस्त थी। हवा जोर से नहीं चली। हवा चलती तो हमारा खेल खतम हो जाता। इसीलिये मैंने पहले भली-भाँति सोच-समझकर पंखा झलनेवाले को रोक दिया था। चाहे जो हो, आज के इंद्रजाल ने मेरी जान बचायी। मुझे लगता है कि राजा के चंचल चित्त को सुधारना है तो मुझे जादू पर निर्भर रहना होगा।" देवराज ने समझाया।

इस करतब को तुम अब भी कर सकते हो। लेकिन दूसरों को दिखाने के पहले हमें खुद एक बार धागे की अच्छी तरह जाँच कर लेनी चाहिये। धागा जलकर जब राख हो जाता है तब वह हवा के सामने ठहर नहीं सकता। इसलिए यह जादू पंखे के नीचे कभी नहीं करना चाहिये।

अनोखी समस्या

एक बार एक राजा अपने दरबार में बैठा हुआ था। उस सभा में मंत्री और कई पंडित हाजिर थे। वे सब किसी बात की चर्चा कर रहे थे। तब एक युवती ने आकर राजा और दरबारियों को प्रणाम किया और विनयपूर्वक प्रार्थना की—"महाराज, यहाँ पर इतने पंडित और मेधावी बैठे हैं। मेरे सामने एक अनोखी समस्या आ पड़ी है। इसे सुलझाकर आप लोग कृपया मुझे अनुगृहीत कीजिये।"

राजा ने बड़े इतमीनान से कहा—"कहो, बेटी! तुम्हारी समस्या कैसी?" राजा के मन में ऐसा आत्म-विश्वास झलक रहा था, मानों वह हर किस्म की समस्या को सुलझाने की ताकत रखता हो!

"मैं एक ब्राह्मण युवती हूँ। मेरे पिता वेदों के पंडित हैं। हम लोग फिलहाल इसी नगर में रहते हैं। हाल ही में मेरे पिता ने मेरा विवाह करने का निश्चय किया और एक युवक को वर भी बुला भेजा। मेरे मामा के दो बच्चे कहते हैं कि वर बड़ा सुन्दर है। जरूर शादी कर लो। लेकिन मेरे दो और चचा के बच्चे भी वर की मीठी बातों पर मुग्ध हो कहते हैं कि ऐसा मौका हाथ से निकल जाने न दो। लेकिन मेरे जो हैं न, वे कुछ निर्णय नहीं कर पाते हैं। संदेह में पड़ गये हैं। इस लिए मैं इस शादी में कोई एक निर्णय नहीं कर पाती हूँ। दूसरी ओर मेरे पिताजी जोर देते हैं। इस हालत में मेरी समझ में नहीं आता कि मुझे इस शादी के लिए वचन देना है, या नहीं। यही सोच-कर मैं बहुत परेशान हूँ। यहाँ पर कई पंडित और ज्ञानी बैठे हैं। कृपा करके मुझे उचित

रमेश [illegible]

सलाह दीजिये। मैं एक निर्णय पर पहुँच सकूँगी।" यह कहकर युवती ने सबको प्रणाम किया।

राजा और पंडित भी उसकी बातें सुनकर चकित रह गये। देखने में वह विवाह के योग्य मालूम होती है। लेकिन उसकी बातों से लगता है कि उसके पति है और चार बच्चे भी हैं। उसका पिता भी शादी करने पर जोर देता है। क्या पति और बच्चों के होते पिता फिर शादी करने को अपनी बेटी से कह सकता है? इससे यही मालूम पड़ता है कि वह या तो झूठ बोलती है या पागल है।

पंडित सब यह सोचकर एक दूसरे का मुँह ताकने लगे कि भरी सभा में उस युवती ने सब का अपमान किया है। इस पर उसकी बातों पर नाराज होना है या हँसकर रह जाना है। राजा ने भी चकित होकर मंत्री की ओर देखा।

मंत्री मुस्कुराते हुए उठ खड़ा हुआ और बोला—"बेटी! तुम खूब पढ़ी-लिखी और सभ्य परिवार की मालूम होती हो। बच्चे तो भोले होते हैं। उनकी बातों पर ज्यादा ध्यान न दो। वे बाहरी तड़क-भड़क देख धोखा खा जाते हैं। लेकिन तुम्हारे पति बड़े समझदार मालूम होते हैं। इसलिए तुम उनकी बातों पर ही ध्यान दो। उनकी उपेक्षा करके कुछ कर बैठोगी तो तुम्हारी गृहस्थी ठीक रही, तो कोई बात नहीं, पर गड़बड़ होगी तो उसकी जिम्मेदार तुम्हीं ही होगी!"

युवती ने मंत्री से कहा—"महा मंत्रीजी, आपने जो सलाह दी, मुझे बड़ी अच्छी लगी। मेरा भी यही विचार है। आपने मेरी बातों का और भी स्पष्ट शब्दों में समर्थन किया, इसलिए मैं आपके प्रति

सदा कृतज्ञ रहूँगी।...महाराज, मुझे आज्ञा दीजिये।" यह कहकर उसने सबको नमस्कार किया और वहाँ से चली गयी।

युवती की बातें जैसी पेचीदेदार थीं, मंत्री की बातें भी सभासदों को वैसी ही लगीं।

अतः राजा ने मंत्री की तरफ मुखातिब हो पूछा—"उस युवती ने क्या पूछा? तुमने क्या जवाब दिया, हमारी समझ में कुछ नहीं आता है।"

इस पर मंत्री ने यों जवाब दिया—

"वह युवती बड़ी अक्लमंद है। वह अपनी समस्या को स्पष्ट-शब्दों में कहने में संकोच करती थी, इसलिए उसने व्यंग्यार्थ में बताया है। यह बात स्पष्ट है कि उसका पिता उसका विवाह करने के ख्याल से एक युवक को लाया। उसका कहना है कि आगे के दोनों बच्चों ने वर को पसंद किया है। आगे के बच्चे माने उसकी आँखें हैं। मतलब है कि वह युवक सुंदर है। बगल के बच्चे माने कान हैं। उन्होंने भी युवक को पसंद किया है, मतलब युवक मधुरभाषण करनेवाला है। संकोच करनेवाला उसका पति है, माने उसका मन। उसकी समस्या यह है कि वर की रूप-रेखाओं और बातों से तृप्त हो कर उससे विवाह करे या अपने मन को भी भाने तक इंतजार करे। मैंने उसे यह संकेत किया कि मन को पसंद आने तक वह प्रतीक्षा करे, नहीं तो जिंदगी-भर उसे अंतरात्मा की शिकायतों का आघात सहन करते रहना पड़ेगा। उसका भी यही विचार था, इसीलिए वह हम लोगों के पास सलाह माँगने आयी है। मैंने उसकी सलाह का समर्थन किया। इसीलिए वह तृप्त होकर वहाँ से चली गयी।"

मंत्री की बातें सुनकर सब विस्मय में पड़ गये।

होगा। लेकिन याद रखो, अगर तुम मेरी पहेलियों का हल न बता सकोगे तो तुम्हें खा जाऊँगा।" राक्षस ने कहा।

"अच्छी बात है!" आनंद ने लाचार होकर कहा।

वहाँ से निकलकर आनंद सीधे राजमहल में पहुँचा। राजा से उसने दस-बारह जहाज उधार में मांगा।

"ओह! यह बहुत बड़ा भाग्यशाली मालूम होता है!" राजा ने यह बात मन में सोची और उससे पूछा—"यदि तुम जैसा कहते हुए करोड़पति हो तो मैं अपनी पुत्री के साथ तुम्हारा विवाह करूँगा। तुम्हें पसन्द है?"

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं? आज मेरी चेष्टायें अच्छी नहीं हैं तो कल अच्छी बनेंगी।" आनंद ने मन ही मन खुश होते कहा।

यह बात सुनते ही राजा संदेह में पड़ गया कि आनंद करोड़पति है कि नहीं। इसकी परीक्षा करने का भी राजा ने निश्चय किया। उस रात को राजा ने उसे अपना अतिथि बनाया और उसके सोने के लिए एक ऐसा बिस्तर डलवाया, जो बहुत ही कड़ा और बदबूदार था। उसके ऊपर एक फटी-पुरानी चादर बिछवा दी। एक नौकर को इस बात का निरीक्षण करने के लिए नियुक्त किया, वह बिस्तर पर कैसे सोता है, इसकी रिपोर्ट दे।

दूसरे दिन सुबह नौकर ने राजा के पास आकर कहा—"महाराज! सारी रात वह जागता ही रहा। बार-बार बिस्तर पर उठ बैठता और कुछ टटोलता रहा।"

राजा की आधी शंका जाती रही।

दूसरे दिन रात को राजा ने आनंद के लिए एक मुलायम बिस्तर और उस पर एक मखमली चादर बिछवा दी और ओढ़ने के लिए एक कश्मीर शाल का भी प्रबंध किया। आज भी नौकर को

वही आदेश दिया जो पिछली रात को दिया था।

तीसरे दिन सुबह नौकर ने राजा के पास आकर कहा—"महाराज! वह रात-भर ऐसी गहरी नींद सोता रहा कि हिला-डुला तक नहीं।"

राजा का संदेह जाता रहा। उसने निश्चय किया, आनंद ऐश-आराम का आदी है और वह जरूर एक करोड़पति होगा।

असल में बात यों हुई कि पहली रात को आनंद ने अपने मटर के दाने को फटी-पुरानी चादर के नीचे छिपाया तो वह कहीं खिसक गया। उसके वास्ते आनंद रात-भर बिस्तर को टटोलता रहा; लेकिन वह कहीं दिखाई न दिया। चूँकि पहली रात को नींद नहीं थी, इसलिए दूसरी रात को वह घोड़े बेचकर सो गया।

चौथे दिन प्रातःकाल का समय था। उसी दिन राक्षस आकर उसके सामने तीन पहेलियाँ रखनेवाला था। उनमें वह एक का भी जवाब न दे सकेगा तो राक्षस उसे खा जाएगा। इस विचार के आते ही आनंद बड़ी चिन्ता में पड़ गया।

उसकी पत्नी राजकुमारी ने आकर पूछा—"क्यों, आप बड़े दुखी मालूम होते हैं? कैसी तकलीफ है?"

"कुछ नहीं!" आनंद ने बड़ी चिन्ता से जवाब दिया।

इससे राजकुमारी भी चिन्ता में पड़ गयी। थोड़ी देर बाद वहाँ पर राजकुमारी की पालिता धाई आयी और पूछा—"क्यों बेटी? चिन्ता क्यों करती हो?"

"मेरे पति दुखी है, उनके दुख का कारण मुझे मालूम न हुआ, इसलिए मुझे बड़ी चिन्ता हो रही है।"

धाई ने आनंद के पास आकर कहा—"कल ही तो तुम्हारा विवाह हुआ, आज तुम चिन्ता में पड़े हुए हो! यह गलत है न? तुमको दुखी देख राजकुमारी भी दुखी है! आखिर इसकी वजह बताओ! मैं पल-भर में दूर कर दूँगी।"

बुढ़ी से तंग आकर आनंद ने राक्षस की सारी बातें समझायीं। यह सुनकर धाई ने कहा—"बस, यही बात! मैं पचास हजार पहेलियाँ जानती हूँ। मैंने और पचास हजार पहेलियों की कल्पना की है।"

इसपर आनंद को बड़ी हिम्मत आयी। इसके बाद जो कुछ इंतजाम करना है वह बुढ़ी ने कर दिया। बुढ़ी ने राजभटों को यह आदेश दिया कि राक्षस के आने पर उसे अंधेरी कोठरी के पास भेज दे। उसके बाद वह आनंद को साथ लेकर अंधेरी कोठरी में गयी और कुंडी चढ़ायी।

दोपहर के समय राक्षस ने राजभवन में आकर पूछा—"आनंद नामक आदमी कहाँ पर है?"

राक्षस को राजभट अंधेरी कोठरी के पास ले आये।

"आनंद, कहाँ पर हो?" राक्षस चिल्ला उठा।

"इस कोठरी में हूँ! तुम अपनी पहेलियाँ बताओ! मैं उनका जवाब दूँगा। अगर न दे सका, तो तुम इस किवाड़ को तोड़कर भीतर आ जाओ और मुझे खा

डालो।" आनंद ने भीतर से ही जवाब दिया।

"अच्छा! यह पहेली खोल दो! मेरी नानी ने चालीस कंबल ओढ़ लिये हैं, वह क्या है?" राक्षस ने पूछा।

भाई ने आनंद के कान में धीरे से पहेली का जवाब सुनाया। तब आनंद चिल्ला उठा—'वाह! कैसी पहेली पूछी! तुम्हारा जवाब है, केले का फूल!'

"अच्छा यह जवाब सही है! लेकिन इस बार जवाब न दे सकोगे। सुनो—'सींग है, पर बैल नहीं; हौदा है, मगर हाथी नहीं, वह क्या है?' राक्षस ने पूछा।

फिर भाई के कहने पर आनंद ने राक्षस को जवाब दिया—'घोंघा'

राक्षस बड़ा निराश होकर बोला—"यह भी कह दिया! अरे देखूं, इस बार बता दो! सुनो—मेरे मुँह नहीं, लेकिन अच्छा जवाब दे सकता हूँ, मुझे कोई नहीं देख सकता, पर सब सुन सकते हैं, मैं कौन हूँ?'

"उफ़! बस, यही! तुम 'प्रतिध्वनि' हो।" आनंद ने कहा।

तुरंत राक्षस का प्राण जाता रहा, पेट फट जाने के कारण वह वहीं मर गया।

इसके बाद राक्षस का वह किला आनंद का हो गया। विवाह के सोलहवें दिन के उत्सव के बाद आनंद ने राजा से कहा—"ससुरजी, अब मैं अपनी पत्नी के साथ अपने किले में जाता हूँ।"

राजा को तब तक न मालूम था कि उसके दामाद के पास एक किला भी है। राजा ने अपनी बेटी के साथ दामाद के किले में जाकर सोने और हीरों के ढेर देखे और कहा—"मैंने पहले ही सोचा था कि मेरे दामाद करोड़पतियों के करोड़पति हैं।"

किस्मतवर

एक गाँव में शंभुदास नामक एक अमीर था। बहुत साल बाद उसके एक लड़का हुआ। शंभुदास ने उस लड़के का नामकरण अपने दादा का नाम 'देवदास' किया।

एक बार एक वृद्ध यात्री शंभुदास के घर आया, बीमार पड़ने के कारण वह दो-चार दिन शंभुदास के घर पर ही रहा। जाते समय बालक देवदास को देख उसने कहा था—"इस लड़के के कारण आपको बदकिस्मती आती रहेगी, यह बड़ा किस्मतवर और दीर्घायु है।"

शंभुदास यह सोचकर आश्चर्य में पड़ गया-मुझे तो बदकिस्मती कैसी? वह क्यों ऐसा कहता है?

लेकिन शंभुदास को जल्द ही बदकिस्मती ने घेर लिया। उसके घर अकसर अतिथि आ-जाया करते थे। राजा को अपने गुप्तचरों के द्वारा यह मालूम हुआ कि शत्रु के राज्य से गुप्तचर वेष बदलकर शंभुदास के घर आया था और ऐसा काम इसके पहले भी एक-दो बार हुआ है! राजा ने शंभुदास को राजद्रोही के रूप में मान लिया और शत्रु देश के गुप्तचरों के विवरण माँगे। लेकिन शंभुदास के घर जो अतिथि आया करते थे उनके विवरण वह भी नहीं जानता था। इसलिए वह कुछ जवाब न दे सका। राजा का संदेह शंभुदास पर दृढ़ हो गया कि वह राजद्रोही है, इसलिए राजा ने उसकी सारी जमीन-जायदाद पर कब्जा कर लिया और उसे नगर से निकाल दिया।

शंभुदास अपनी पत्नी और बच्चों के साथ जो पुराने कपड़े और बर्तन थे, उनको लेकर नगर से दूर एक छोटे-से

रघुनाथ सिंह

यह खिलौना खरीदा है। उसने सोचा कि बच्चे को खिलौने के लिए मचलते देख खिलौनेवाले ने सस्ते में यह खिलौना दिया होगा। वह जानती न थी कि चावल के बर्तन पर का ढक्कन सोने का था।

देवदास के घोड़ेवाले खिलौने के पहिये थे। ढकेलने से वह पहियों पर दौड़ता, उसे खूब दौड़ाने के ख्याल से देवदास ने ज़ोर से उस पर लात मारी। वह खिलौना दीवार से जा टकराया। खिलौना टूटा और उस में स एक सोने की डिबिया लुढ़क पड़ी। उसका ढक्कन खोलकर देखा तो उसमें आठ हीरे थे।

हीरों को देख देवदास की माँ ने उससे कहा–"बेटा, देखा, तुमको जिस खिलौनेवाले ने यह घोड़ा दिया, वह कैसे धोखा खा गया? शायद वह भी नहीं जानता हो कि इस खिलौने में सोने की यह डिबिया और हीरे हैं। फिर कभी वह दिखाई देगा तो उसको बुलाकर यह डिबिया उसे दे दो।"

दूसरे दिन देवदास ने खिलौनेवाले को कहीं दूर पर जाते देखा, देवदास भागता गया। खिलौनेवाले से मिलकर देवदास ने कहा–"तुमने मुझे घोड़े का जो खिलौना दिया; उसके पेट में यह डिबिया थी, देखा है, इस में क्या है?" यह कहकर उसने डिबिया खोलकर हीरे दिखाये।

खिलौनेवाले ने झट देवदास के हाथ से डिबिया खींचकर जेब में रख ली और कहा–"तुम बहुत अच्छे लड़के हो!" फिर वह जल्दी-जल्दी डग भरते वहाँ से चला गया।

देवदास की माँ को जब यह मालूम हुआ कि डिबिया खिलौनेवाले के हाथ पहुँची तो वह बहुत खुश हुई। वास्तव में खिलौनेवाला एक चोर व्यापारी था। वह सभी गाँवों का चक्कर लगाता, जहाँ

जो कुछ मिलता, उसे हड़प लेता और दूसरे गाँव में ले जाकर बेच डालता, उस ने देवदास के हाथ जो खिलौना बेचा था, उसे एक बढ़ई के घर से चुरा लाया था। यों तो वह बहुत दिनों से चोरी का माल बेचा करता था, लेकिन कभी ऐसी कीमती चीज़ उसके हाथ न लगी थी। उस लकड़ी के खिलौने खरीदनेवाले लड़के के हाथ से उसे सोने की थाली, सोने की डिबिया और आठ हीरे भी मिले। इसलिए उसके हाथ जो और खिलौने बचे थे, उन्हें बच्चों में मुफ़्त में बाँटकर शहर में चला गया। वहाँ पर उसने सोने की थाली को खूब रासायनिक पदार्थों से धोकर चमका दिया। तब उसने देखा कि थाली के नीचे संस्कृत के अक्षर खुदे थे। लेकिन उसकी समझ में कुछ नहीं आया। उसने सोचा कि कोई श्लोक खुदा हुआ होगा।

खिलौनेवाले ने एक व्यापारी की पोशाक पहनी, सोने की थाली लेकर एक व्यापारी के पास पहुँचा।

व्यापारी ने उसे जाँचकर देखा और पूछा—"यह थाली बड़ी मूल्य की वस्तु है। इसे बेचते क्यों हो?"

"कीमती है। इसीलिए तो बेचता हूँ। ज़रूरत हो तो लीजिये।" खिलौनेवाले ने जवाब दिया।

खिलौनेवाले की बातों से व्यापारी को मालूम हुआ कि यह थाली उसकी नहीं है। इसलिए उसने डाँटते हुए पूछा—"सच बताओ, यह थाली तुमको कहाँ से मिली?"

यह बात सुनते ही खिलौनेवाले ने भागने की कोशिश की। सबने दौड़कर उसको पकड़ लिया। उसके कपड़ों की तलाशी लेने पर उसकी जेब में एक सोने की डिबिया और उस में आठ हीरे भी

मिले। व्यापारी ने उसको राज भटों के हाथ सौंपकर दरबार में भेजा।

खिलौनेवाले ने सोचा कि झूठ बोलने से वह बच न सकेगा। इसलिए उसने सारी बातें पहले से आखिर तक सच बतादीं।

तब मालूम हुआ कि वह सोने की चिड़िया और हीरे अमुक जमीन्दार के हैं। यह भी मालूम हुआ कि जिस सोने की चिड़िया को लकड़ी के घोड़े के पेट में छिपाया गया था, उसे जमीन्दार के घर से दो महीने पहले एक बढ़ई ने चुराया था। इस प्रकार एक के बदले दो चोरों का पता लग गया।

इसके साथ एक और बात का भी पता चला कि सोने की थाली के नीचे राजा के पिता का नाम और शंभुदास के दादा के नाम देवदास भी खुदे थे। उन पर संस्कृत में खुदा था कि देवदास की राजभक्ति पर प्रसन्न होकर राजा ने उस सोने की थाली-भर अशर्फियाँ भरकर उसे भेंट में दी हैं। जमीन्दार को जब यह मालूम हुआ कि ऐसे राजभक्त, देवदास का पोता शंभुदास उसके यहाँ मामूली नौकर का काम करता है तो उसे बड़ा दुख हुआ और जमीन्दार ने शंभुदास से उसकी इस बुरी हालत का कारण पूछकर सब जान लिया।

शंभुदास ने जमीन्दार से बताया कि वह खुद नहीं जानता कि राजा ने उसे कैसे राजद्रोही समझा। शंभुदास की यह बात सुनकर जमीन्दार ने उसकी सजा को रद्द करने की राजा को सिफ़ारिश की।

राजा ने शंभुदास की सजा रद्द ही नहीं की, बल्कि उसकी जमीन-जायदाद जो जब्त की गयी थी, लौटा दी। इस तरह देवदास अपने पिता की बदकिस्मती को दूर करने का कारण बना।

[illegible]

बच्चों में इस बात का संदेह हुआ कि सिंह और बाघ लड्डू, खीर आदि खाते हैं कि नहीं? अगर खाते हैं तो क्या हमारी बात सुनते हैं कि नहीं?

वह दीवाली का दिन था। दादी ने तरह-तरह की मिठाइयाँ बनायी थीं। मीठी पूड़ियाँ, गुलाब जामुन बड़े मज़ेदार थे। बड़े लड़के ने कहा कि सिंह ये मिठाइयाँ नहीं खायेंगे! बाकी बच्चों को इस पर संदेह हुआ। सब ने दादा के पास जाकर पूछा। दादा ने सुँघनी लेते हुए कहा!

"इसके पीछे एक कहानी है! बच्चे!"

"कहानी सुनायेंगे, दादाजी! कहानी सुनायेंगे!" सब बच्चे यह चिल्लाते दादा के चारों तरफ़ बैठ गये।

"कहानी का सिंह मीठी पूड़ियाँ खाता है, दादाजी?" छोटे लड़के ने पूछा।

"ज़रा सब्र करो बेटा!" यह कहते दादा ने कहानी शुरू की।

एक गाँव में एक ब्राह्मण रसोइया था। शादी-विवाह, दावतों तथा बरसियों के समय रसोई बनाने आस-पास के गाँववाले उसी रसोइये को बुला भेजते। उस ब्राह्मण की रसोई इतनी बढ़िया होती कि सब कोई उसकी तारीफ़ करते न थकते।

एक बार एक ज़मीन्दार के घर एक बड़ी दावत हुई। रसोई बनाने के लिए ब्राह्मण को बुलावा आया। दावत के ख़तम होने पर ब्राह्मण मिठाइयों की गठरी बना कंधे पर डाल जंगल के रास्ते घर के लिए चल पड़ा। यही बड़ी भूल हो गयी थी। क्यों कि उस जंगल में एक गुफा थी, उसमें एक सिंह रहता था।

सिंह ने ब्राह्मण को देखते ही ललकार कर कहा—"अबे, ठहर जाओ! मुझे बड़ी भूख लगी है। तुमको खा डालूँगा।

अनिल कुमार

"हे जंगल के राजा! मुझे क्यों खाते हो? मुझ से भी मजेदार मिठाइयां इस गठरी में है। इनको चाहे तो खा लो।" यह कहकर ब्राह्मण ने गठरी खोल कर रख दी।

गठरी के खोलते ही सिंह की नाकों में अच्छी सुगंधी आयी। सिंह ने लपक कर तीन चौथाई की मिठाइयां खा डाली और कहा—"ओह! ये मिठाइयां कितनी स्वादिष्ठ है! मैंने ऐसी मिठाइयां कभी नहीं खायी। तुमने मुझे बढ़िया खाना दिया, मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूं। मेरी गुफा से थोड़ा सोना ले जाओ।"

सिंह जब कभी मनुष्यों को मार डालता तब उनका सोना और रुपये अपनी गुफा के एक कोने में डालता गया था।

सिंह की गुफा में जो धन था, उसे देख ब्राह्मण का मन ललचा गया।

"हे जंगल के राजा! तुम चाहो तो मैं रोज तुमको ऐसा खाना ला दूंगा।" ब्राह्मण ने कहा।

"जरूर लाओ!" सिंह ने कहा।

उस दिन से वह ब्राह्मण रोज बढ़िया मिष्टान्न बनवाकर ले आता और सिंह के खाने के बाद गुफा से थोड़ा धन ले जाता। सिंह को बढ़िया खाना मिलने लगा। ब्राह्मण की गरीबी भी दूर होती गयी।

लेकिन इन दोनों की दोस्ती से सियार के बुरे दिन आये। सिंह के पीछे सियार भी लगे रहते है। सिंह किसी जानवर का शिकार करके पेट भर खा लेता है और बाकी छोड़ देता है, उसे खाकर सियार अपने पेट भरते है।

लेकिन सिंह ने मिठाई खाना जब से शुरू किया तब से उसने शिकार खेलना भी छोड़ दिया। इसलिए सियारों को भूखा रहना पड़ता था।

एक सियार ने सोचा कि अगर सिंह के साथ इस ब्राह्मण का मेल न छुड़ाऊंगा

तो मैं भूखों मर जाऊँगा। यह सोचकर ब्राह्मण का सिर छुड़ाने के लिए सियार ने एक उपाय किया।

एक दिन सवेरे सियार सिंह के पास आकर चिल्ला पड़ा—"महाराज! गजब हो गया! गजब!"

"घबराते काहे को हो! कैसा गजब? क्या हुआ? कोई खतरा है! जल्द बताओ।" सिंह ने डांटा।

"कल रात को मैंने ब्राह्मण के दर्वाजे पर छिपे रहकर यह बात सुनी कि वह अपनी औरत से कह रहा था कि तुमने ब्राह्मण को जो धन दिया, उससे वह अमीर बन बैठा है। इसलिए आज जो खाना लायगा उसमें जहर मिलाकर आपको मार डालेगा। मैंने यह बात खुद अपने कानों से सुनी है।" सियार ने सिंह से कहा।

यह बात सुनते ही सिंह को गुस्सा आया। दांत पीसते हुए बोला—"ऐसी बात है? अच्छा! उसको आने दो! उसका काम तमाम कर दूंगा।" सियार को अपनी चालकी पर बड़ा संतोष हुआ।

थोड़ी देर बाद ब्राह्मण मिठाइयाँ लेकर आ पहुँचा।

ब्राह्मण को देखते ही घूरते हुए सिंह ने कहा—"अरे मानव! तुम बेईमान हो!

दगाबाज़ हो! मुझे मार डालना चाहते हो?"

ब्राह्मण का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसने घबराये हुए स्वर में पूछा—"आप यह क्या कहते हैं, महाराज? मैंने किया ही क्या?"

"सच बताओ, इस खाने में तुमने ज़हर मिलाया है कि नहीं?" सिंह ने पूछा।

"छी: छी:! ऐसा बेईमान मैं नहीं हूँ। आप के प्रति ऐसा दगा मैं नहीं कर सकता? अगर आपको संदेह है तो मैं खुद खाकर दिखाऊँगा कि इसमें ज़हर है कि नहीं।" ब्राह्मण ने कहा।

"महाराज! यह ब्राह्मण यह सोचकर बचना चाहता है कि वह किसी भी तरह मरेगा। इसको इतनी आसानी से मरने न दीजिये। मैं पहले यह खाना खाकर देखता हूँ। इसमें ज़हर है तो आप इस ब्राह्मण को खा डालिये।" सियार बोला।

सियार मिठाई का एक टुकड़ा खाकर इस तरह चित नीचे गिर पड़ा, मानो मर गया हो। सिंह का संदेह दूर हो गया। "सियार ज़हर भरा खाना खाकर मर गया है। अब तुमको उचित सज़ा देता हूँ।" सिंह ने ब्राह्मण से कहा।

"महाराज! अगर मुझ से गलती हुई है, तो मुझे सज़ा देना उचित ही है। लेकिन मेरी आप से एक विनती है! मैं किसी तरह मर जाऊँगा। इसलिए आप एक काम कीजिये। सियार का चमड़ा निकालकर मुझे ओढ़ दीजिये। तब मुझे खाइये। मैं सीधे स्वर्ग चला जाऊँगा।" ब्राह्मण ने सिंह से प्रार्थना की।

"अरे, इस में कौन कठिनाई है! सियार तो मर ही गया है।" यह कहते पंजा खोल सियार पर झपटा। सियार उठ खड़ा हुआ और लगा दौड़ने। बेचारे उसकी चालाकी काम न आयी!

कुछ नहीं

एक गाँव में राजाराम नामक एक गरीब रहता था। वह बड़ा भोला था। वह रोज जंगल में जाता, लकड़ी और शहद ले आता, इनको बेचकर अपने दिन गुजारता।

एक दिन राजाराम को जंगल में कई चीजें मिल गयीं। उसकी लकड़ियों की गठरी भी बड़ी हो गयी। उसे वह अकेले उठा नहीं पाता था। किसी की मदद की जरूरत थी। वह इधर-उधर ताकता रहा कि कहीं कोई दिखाई दे तो उसकी मदद ले। इतने में धूर्तराम नामक एक आदमी उधर से आ निकला।

धूर्तराम बड़ा झगड़ालू था। मौका मिले तो बस, वह हर किसीसे पैसे वसूल करता।

धूर्तराम को देखते ही राजाराम ने कहा—"भैया! समय पर आ गये। जरा यह गठरी तो उठाओ।"

"अच्छा! उठाऊँगा, लेकिन मेरी मदद का इनाम देने तुम्हारे पास कुछ है कि नहीं!" धूर्तराम ने राजाराम से पूछा!

"कुछ नहीं है, धूर्तराम!" राजाराम ने दीनता से कहा।

"अच्छी बात है!" यह कहकर धूर्तराम ने गठरी उठाने में मदद दी। फिर पूछा—"तुम्हारे पास जो है, वही फेंक दो, मैं अपने रास्ते चलता बनूँगा।"

"अरे धूर्तराम! मैं ने पहले ही कह दिया कि मेरे पास कुछ नहीं है।" राजाराम ने कहा।

"मैं मानता हूँ। लेकिन 'कुछ नहीं है' नामक चीज ही दे दो, मैं चला जाऊँगा।" धूर्तराम ने फिर पूछा।

"मैं ने यही कहा था कि मेरे पास कुछ नहीं है। मैं ने यह नहीं कहा था

कि मेरे पास 'कुछ नहीं है' नामक वस्तु है।" राजाराम ने कहा।

"मैं यह सब नहीं जानता। मैं ने जब यह पूछा कि तुम्हारे पास क्या है, तब तुमने कहा कि 'कुछ नहीं है।' मैंने कहा–'जो है' दे दो। या लकड़ियों की गठरी दो।" धूर्तराम ने ज़िद किया।

धूर्तराम का हठ देखकर राजाराम को गुस्सा आया। "तुम अपनी हेठी यहाँ न दिखाओ। मुखिया के पास चलो। वही फ़ैसला करेगा।" यह कहकर राजाराम धूर्तराम को मुखिया के पास ले गया।

मुखिया ने दोनों की बातें सुनकर धूर्तराम से कहा–"तुम ने राजाराम की जब मदद की, तब तुमने उससे क्या पूछा?"

"तुम्हारे पास देने को क्या है? पूछा। तब उसने कहा कि कुछ नहीं है।" धूर्तराम ने कहा।

"इसके बाद तुम ने मदद की। किसी चीज की आशा से तुमने मदद की?" मुखिया ने पूछा।

"अपने पास कुछ नहीं है, कहा है न! मैं ने सोचा कि वही देगा। यही सोचकर मदद की।" धूर्तराम ने कहा।

"तो उसने तुम्हें कौन चीज दी?" मुखिया ने पूछा।

"कुछ नहीं है।" धूर्तराम ने कहा।

"तो इसका मतलब यह हुआ कि तुमने जो पूछा, सो उसने दे दिया। उसके पास है कुछ नहीं। इसलिए उसने भी तुम्हें कुछ न दी। फिर क्यों झगड़ा करके गठरी माँगते हो? फिर कभी ऐसा काम करोगे तो तुमको कड़ी सजा दूँगा।" मुखिया ने धूर्तराम को डाँटकर भेज दिया।

इस झंझट से छुट्टी पाकर राजाराम भी खुशी-खुशी घर चला गया।

बाणासुर का रथ एक हज़ार हाथ लंबा है, जिसमें एक हज़ार घोड़े जुते हैं। रथ पर भालू का चमड़ा ढका हुआ है। उसपर एक लाल झंडा, मयूर पताका लहरा रही है। रथ में गदे, धनुष-बाण और खड्ग धरे हैं। कुंभाण्ड को अपना सारथी बनाकर बाणासुर अनिरुद्ध के साथ लड़ने निकला। इसे देख उसके सभी सेनापति जोश में आ गये और अपनी सेनाओं को रथ के आगे और बाजुओं में चलाते निकले।

अनिरुद्ध ने देखा, बाणासुर अपने बाजुओं के साथ दल-बल समेत आ रहा है। फिर भी उसने बाणासुर की परवाह न की, वह अकेला था, पर उसकी हिम्मत गजब की थी। इसलिए वह और सीधे उसके सामने आने लगा।

एक साधारण मानव को, जिसके पास उल्लेखनीय अस्त्र-शस्त्र नहीं हैं, बड़ी हिम्मत के साथ हमला करते आते देख बाणासुर को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह अपने राक्षस-सैनिकों से बोला—"तुम लोग देखते क्या हो? उसको पकड़ो, मार डालो!" कहते बाणासुर अनिरुद्ध पर तीरों की वर्षा करने लगा।

अनिरुद्ध के हाथ में केवल एक तलवार थी; फिर भी उसने उन तीरों की परवाह न की और सामने आनेवाले राक्षसों को ढकेलते बाणासुर के राक्षसों

के पास पहुँचा। यह देख बाणासुर का सैनिक-दल आश्चर्य चकित हो देखता रहा।

रथ के निकट आते ही अनिरुद्ध ने बाणासुर के रथ के घोड़ों को मार डाला। खून की नदियाँ बहने लगीं। इस बीच बाणासुर ने अनिरुद्ध पर कई हथियार फेंके। राक्षस-दल यह सोचकर कोलाहल करने लगा कि अनिरुद्ध मर गया है। लेकिन अनिरुद्ध केवल आगे बढ़ न सका था। उसे राक्षसोंने आगे बढ़ने से रोक दिया था।

इतने में बाणासुर ने अनिरुद्ध पर एक महाशक्ति का प्रयोग किया। अनिरुद्ध ने उसे अपने हाथ में लेकर सारी ताकत लगाकर उसे फिर बाणासुर पर फेंका। वह महाशक्ति बाणासुर के कलेजे को चीरकर उसकी पीठ में से बाहर निकली और जमीन में धंस गयी। बाणासुर ध्वज-स्तंभ को पकड़कर लुढ़क पड़ा।

कुंभाण्ड बाणासुर को होश में लाकर बोला—"दुश्मन असाधारण प्रतिभाशाली मालूम होता है। लगता है, सारी दुनिया उसपर चढ़ आये तो भी परवाह नहीं करता। उसकी हिम्मत को देखा! उसे हराना मामूली बात नहीं है। हमें पहले अपने प्राणों की रक्षा की बात सोच लेनी चाहिए। नहीं तो सारे राक्षस-कुल के लिए कलंक की बात हो जाएगी।"

इसपर बाणासुर ने अपने मंत्री से कहा—"मैं इस तरह इस मूर्ख को पकड़ लूँगा जैसे गरुड़ सर्प को पकड़ लेता है।" यह कहकर वह अदृश्य हुआ और उसे ढूँढनेवाले अनिरुद्ध पर कृष्ण-सर्पमुखी बाण फेंककर उसके सभी अंगों को इस तरह बांध दिया जिससे वह हिल-डुल न सके। इसके बाद वह कुंभाण्ड से बोला—"देखते हो? यह घमंडी दुष्ट हमारे हाथों में फँस गया। उसे तुरन्त तलवार से

मार डालना होगा, नहीं तो उसने हम पर जो कलंक लगाया है वह कभी न मिटेगा।"

इस पर कुम्भाण्ड ने बाणासुर को समझाया—"सो तो ठीक है! लेकिन हमें एक बात का ख्याल रखना चाहिए। वह उषा के साथ गांधर्व विवाह करके उसका पति बन गया है। अगर इसकी कोई हानि होगी तो उषा को अपार दुख होगा। पहले हमें यह जान लेना चाहिए कि यह कौन है, कहाँ से आया है? मुझे ऐसा मालूम होता है कि इसका सौन्दर्य और पराक्रम देवताओं से बढ़कर है। यह जरूर बड़ा आदमी होगा। वरना आपके साथ इतनी हिम्मत से लड़नेवाला और कौन है? असहाय होकर भी उसके मुख पर कैसे कोप प्रकट हो रहा है! जरा सोचिये तो कि इससे बढ़कर आपका प्रतिद्वन्द्वी कौन मिलेगा? इससे बढ़कर वीर जामाता कौन मिलेगा और इससे बढ़कर उषा के लिए योग्य पति कौन मिलेगा?"

बाणासुर को लगा कि कुम्भाण्ड की बातों में सचाई है। बाणासुर ने स्वीकृति-सूचक सर हिलाया। उसके बाद कुछ सैनिकों को अनिरुद्ध के पास पहरे पर रखकर वह घर चला गया।

तब नारद अनिरुद्ध के पास पहुँचकर उसे सांत्वना देते हुए बोले—"मैं श्रीकृष्ण को यहाँ ले आता हूँ। उनके आने से तुम्हारी सारी तकलीफ़ें दूर हो जाएँगी। तब तक तुम थोड़ी हिम्मत से सहन कर लो।" यह कहकर नारद वहाँ से चले गये।

अनिरुद्ध ने सर उठाकर देखा—खिड़की के पास आँसू बहाते उषा दिखाई दी। उसने उषा से कहा—"तुम्हारा पिता मुझसे आमने-सामने लड़ न सका। इसलिए माया-जाल में मुझे बंदी बनाया; फिर

भी चिन्ता की कोई बात नहीं है। मेरी तकलीफ़ को दूर करनेवाले श्रीकृष्ण हैं। उन्होंने अपने सुदर्शन चक्र से कई राक्षसों का संहार किया है। ऐसी हालत में मेरे इस अपमान को वे सहन नहीं कर सकते! घबराती क्यों हो? तुम्हारे पिता के अच्छे दिन लद गये।"

इसके बाद अनिरुद्ध ने दुर्गा का स्तोत्र करते हुए उसका ध्यान किया। थोड़ी ही देर में लोकेश्वरी दुर्गा प्रत्यक्ष हुईं और उसके सभी बंधनों का स्पर्श करके अनिरुद्ध को मुक्त किया। फिर सान्त्वना देते हुए कहा–"जल्द ही श्रीकृष्ण आकर बाणासुर को पराजित करके तुम्हें ले जाएँगे। तुम्हारा शुभ होगा।" यह कहकर दुर्गा अंतर्धान हुईं।

इस बीच में द्वारका में बड़ा कोलाहल मच गया।

अनिरुद्ध को चित्ररेखा के द्वारा अपने साथ ले जाने के बाद अनिरुद्ध की पत्नियाँ होश में आयीं और विकल हो ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगीं।

अनिरुद्ध के भवन से नारियों के आर्तनाद सुनकर नगर के सभी यादव प्रमुख अपने अपने घरों से बाहर आये। इसी समय सभा-भवन में भेरी बज उठी। थोड़ी ही देर में कृष्ण, बलराम आदि सभी लोग वहाँ पहुँचे। अनिरुद्ध के अदृश्य होने का समाचार सुनकर सभी चिन्ता में डूब गये। यहाँ तक कि श्रीकृष्ण की आँखों से भी आँसू आ गये।

यह देख विकद्रु ने कृष्ण से कहा–"आपकी छाया में सारा यादव-वंश कुशल है। यहाँ तक कि इन्द्र भी सब तरह से आप पर निर्भर है। ऐसी हालत में आपकी आँखों से आँसू देख अनिरुद्ध के अदृश्य होने के दुख की अपेक्षा यह हमारे लिए बड़ा दुख का कारण होगा।"

इस पर कृष्ण बोले—"मेरा दुख तो इसीलिए है कि अनिरुद्ध का पता न लगने पर लोग क्या समझेंगे? प्रद्युम्न जब छोटा-सा बच्चा था तब एक राक्षस उसे उठा ले गया था; लेकिन उस राक्षस को प्रद्युम्न मारकर वापस लौटा, तब मेरी प्रतिष्ठा बनी रही। इस बार भी कुछ ऐसा ही हुआ मालूम होता है। मेरे कोई शत्रु मुझपर क्रोध के कारण अनिरुद्ध को शायद उठा ले गया हो। यह मामूली घटना नहीं है। कोई उपाय ही तो बताइये! इसके आधार पर मैं यथाशक्ति जो कुछ करना है, करूँगा।"

सात्यकी ने सलाह दी कि सभी प्रांतों में अनिरुद्ध को ढूंढने आदमी भेजे जायें। उग्रसेन ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया और अनिरुद्ध को ढूंढने के लिए कई लोगों को रथ, घोड़े, पैदल जाने का तुरंत आदेश दिया।

अनाधृष्टि नामक एक सेनापति ने श्रीकृष्ण से सकुचाते हुए कहा—"महाशय! मेरा एक संदेह है, देवता लोगों ने कई बार आप से उपकार पाये; लेकिन पारिजात को लेकर इंद्र ने आपके साथ युद्ध किया है। उस युद्ध में वह हार गया है। यह अपमान उसके मन को कुरेदता होगा; इसलिए शायद इंद्र ने भी अनिरुद्ध को गायब किया हो।"

इसपर कृष्ण हँसकर बोले—"देवता कभी ऐसा काम न करेंगे, यह राक्षसों का है। मेरे द्वारा देवताओं का उपकार होता है, यह जानते हुए वे कभी ऐसा काम न करेंगे।"

अक्रूर ने भी कृष्ण की बातों का समर्थन किया।

"अनिरुद्ध को इस तरह चुरा ले जाने का काम पुरुषों ने न किया होगा। यह किसी दुष्ट नारी का काम हो सकता है।

दैत्य, दानव और देवता नारियाँ कई माया-जाल जानती हैं। वे कहीं भी जा सकती हैं, किसी को भ्रम में डाल सकती हैं, इसलिए हमें इस आधार पर ढूँढ़ना होगा।" श्रीकृष्ण ने कहा।

कुछ दिन बाद अनिरुद्ध को ढूँढ़ने गये हुए गुप्तचर लौट आये और निराशा से बोले कि अनिरुद्ध का पता कहीं न लगा।

एक दिन सबेरे श्रीकृष्ण सभा में आये। उस समय उग्रसेन आदि यादव सब सभा में उपस्थित थे। ठीक उसी समय नारद वहाँ आये। स्वागत-सत्कार के बाद नारद ने सब के चेहरों पर दृष्टि दौड़ायी और पूछा—"आप सब क्यों किसी चिन्ता में डूबे हुए हैं?"

"क्या करें? अनिरुद्ध दिखाई नहीं देता। उसकी हमने खोज करायी, लेकिन कोई फ़ायदा न हुआ।" श्रीकृष्ण ने कहा।

"यों तो मैंने कई युद्ध देखे' लेकिन आपके अनिरुद्ध ने बाणासुर के साथ जो युद्ध किया, वैसा मैंने कहीं न देखा। असल में बात यूँ हुई, बाणासुर की पुत्री उषा ने अनिरुद्ध से प्रेम करके अपनी सखी चित्र-लेखा को उसके पास भेजा। चित्ररेखा ने अनिरुद्ध को उठा ले जाकर उषा के पास पहुँचा दिया। यह बात मालूम होते ही बाणासुर अनिरुद्ध से लड़कर बुरी तरह से हार गया। आखिर माया का सहारा ले सर्पमुखी बाणों से अनिरुद्ध को बंदी बनाया। इसलिए आप बाणासुर के पास जाकर उसका अंत कीजिये। बाणासुर का शोणपुर यहाँ से बहुत दूर है। आप गरुड़ की मदद से वहाँ जाइये। मैं यही बताने आया हूँ। अब मुझे आज्ञा दीजिये।" यह कहकर नारद वहाँ से चले गये।
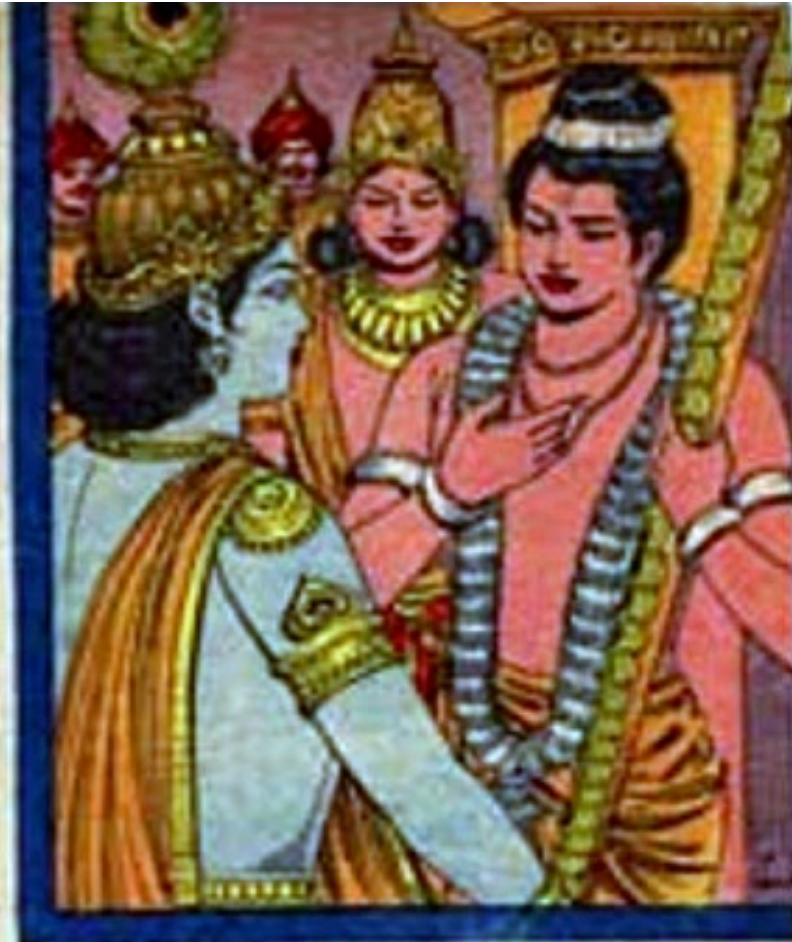
श्री कृष्ण ने गरुड़ का स्मरण किया; झट गरुड़ वहाँ आ पहुँचा। श्री कृष्ण, बलराम और प्रद्युम्न गरुड़ पर सवार हुए।

जब वे शोण नगर के समीप पहुँचे तब उन्हें एक अद्भुत प्रकाश दिखाई दिया।

"यह प्रकाश कैसा?" बलराम ने पूछा।

"हम अब बाणासुर के नगर के निकट पहुँच रहे हैं। शिवजी ने इस नगर की रक्षा के लिए सभी अग्नियों को नियुक्त किया है। अब हमारे सामने जो अग्नि दिखाई देती है वह माहेश्वरीय अग्नि है। इसकी बाबत गरुड़ देख लेगा।" श्री कृष्ण बोले।

श्री कृष्ण के यह कहते ही गरुड़ ने आकाश-गंगा से जल भर लिया और अग्नि पर छिड़ककर उसे बुझा दिया। इसपर श्री कृष्ण ने गरुड़ की बड़ी प्रशंसा की।

गरुड़ कुछ और आगे बढ़ा तो शिवजी के द्वारा नियुक्त बाकी अग्नियों ने बड़े ज़ोर से सिंहनाद किये। उनको सुनकर बाणासुर ने युद्ध की तैयारी की।

इसी बीच अंगीरस नामक अग्नि ज्योतिस्टोम और विभांग नामक अग्नियों को दोनों पार्श्वों में रखकर और अन्य-अग्नियों की सहायता लेकर कृष्ण से लड़ने निकला।

कृष्ण ने उन्हें देखते ही कहा—"हे अग्नियो! तुम्हारे सारे तेज को पल-भर में राख कर दूंगा! हे अंगीरस! मुनियों के हवन को खाकर तुम्हारी आँखों में चर्बी चढ़ गयी, इसलिए मुझसे लड़ने आते हो? हटो यहाँ से!"

अंगीरस क्रोध में आकर बोला—"इस आयुध से मैं आपके प्राण ले लूंगा!" यह कहते उसने कृष्ण पर एक शूल फेंक दिया।

श्री कृष्ण ने उसे बीच में ही अपने बाण से काट दिया और दूसरे बाण से अंगीरस के कलेजे को छेद दिया। अंगीरस खून निकलते रथ पर बेहोश हो गया। यह देख सभी अग्निमुख तितर-बितर हो गये।

उनके हटते ही कृष्ण की आँखों के सामने शोणपुर चमकता दिखाई दिया।

अरण्य पुराण

[२९]

मौगली को मौत को भड़काने में मजा आता है। अलावा इसके उसके मन में यह कामना थी कि वह यह साबित करे, जंगल में उसका सामना करनेवाला कोई नहीं है। भालू की मदद से उसने पेड़ों पर से कई बार शहद के छत्तों को लूट लिया। वह यह जानता था कि मधु-मक्खियाँ जंगली लहसुन को देख भाग जाती हैं।

इसलिए अब वह मुट्ठी-भर जंगली लहसुन लेकर उसकी गठरी बांधे एकाकी के कहे मुताबिक खून के दागों को देखकर चलने लगा। वे दाग घने पेड़ों के नीचे अंकित होते गये थे। घने वृक्ष और मधु-मक्खियों के छत्तों के बीच केवल झुरमुट थे।

उस प्रदेश को मौगली ने एक घंटे तक ध्यान से देखा। उसके बाद वह पेड़ों के समूह में चला गया। आठ फुट ऊँचे एक पेड़ पर चढ़ बैठा। वह मन में गुनगुनाते छुरी निकालकर अपने तलवे पर उसे शान धरने लगा।

दोपहर के होते-होते उसे कुत्तों की झुंड की गंध आ गयी। थोड़ी देर बाद उनके पैरों की आहट भी होने लगी। वे सुनक एकाकी के खून के दागों की गंध लेते आ रहे थे। लाल कुत्ता भेड़िये से आधा भी न था; लेकिन उन कुत्तों के पैरों और जबड़ों में बड़ी ताकत थी। सुनकों के नेता का सर दीखते ही मौगली चिल्ला पड़ा—"शिकार होना चाहिए।" सुनकों के नेता ने सर उठाकर देखा। उसके पीछे आनेवाले असंख्य सुनक ठहर गये। उनके मुँह खून से लथपथ थे। वे कुल मिलाकर दो सौ तक थे।

शुनक-नेता खून के दागों के निशान के पीछे अपनी भीड़ को ले जाने की कोशिश कर रहा था। अगर ऐसा ही चले तो दिन के वक्त ही शुनक भेड़ियों के प्रदेशों में पहुँच जाएँगे।

पर मौगली उनको संध्या होने तक उसी पेड़ के पास रोक देना चाहता था।

"किसकी अनुमति लेकर तुम लोग इधर आये हो?" मौगली ने शुनकों से पूछा।

एक शुनक अपने जबड़ों को दिखाते हुए बोला—"ये सारे जंगल हमारे हैं।"

मौगली चूहे की तरह दांत दिखाते खिलखिला कर बैठा, मानों उसकी दृष्टि में शुनक चुहियों से भी बदतर हों।

कुत्तों की भीड़ पेड़ के तने के चारों ओर फैल गयी। शुनक-नेता क्रोध में आकर गालियाँ देने लगा—"तुम पेड़ के बंदर हो!"

इसके जवाब में मौगली ने अपने पैर को शुनक-नेता के सर पर हिलाया। इससे कुत्तों की भीड़ क्रोध में पागल हो गयी। शुनक-नेता उछलकर मौगली को पकड़ने गया; लेकिन वह झट अपने पैर को ऊपर खींचते हुए बोला—"अरे कुत्ते! ऐ लाल कुत्ते! दक्षिण में जाकर तुम छिपकलियाँ पकड़ खाओ! तुम्हारे पैरों की उंगलियों के बीच बाल ही बाल है।"

मौगली को फिर अपने पैर हिलाते देख सभी शुनक चिल्ला उठे—अरे बंदर! तुम्हारे बदन पर रोएँ नहीं हैं! उतर आओ! तुमको हम इस तरह मार डालेंगे कि बिना खाये पेड़ पर मर जाओगे।

मौगली जो यही चाहता था कि शुनक उत्तेजित हो जाए। वह डाल पर पैर पसारकर लेट गया और शुनकों के बारे में अपने विचार बताते गया। मौगली बहुत

बकवास करनेवाला है। उसकी बातें सुनकों पर घूसों जैसे प्रहार करने लगीं। इस पर नाराज हो सुनक गुर्राते इस तरह भूँकने लगे मानो आसमान को सर पर उठा लिया हो! सुनक-नेता कई बार मौगली को पकड़ने के लिए उछल पड़ा। मौगली का दायाँ हाथ तैयार था। लेकिन निशाने का चूक जाना उसे पसंद न था।

आखिर सुनक-नेता, गुस्से में पागल हो, जमीन से सात-आठ फुट ऊँचाई पर उछल पड़ा। मौगली के दायाँ हाथ अजगर के सर की तरह झट आगे बढ़ा और सुनक-नेता की गर्दन को अपनी पकड़ में लिया। उस धक्के से मौगली की डाल हिल गयी और वह गिरते-गिरते बच गया।

मौगली ने कुत्ते की गर्दन को छोड़े बिना एक-एक इंच धीरे से डाल पर खींच लिया। उसने बाएँ हाथ से कुत्ते की पूँछ काट ली और सुनक को जोर से नीचे गिरा दिया।

और क्या था! अब सुनक एकाकी के खून के निशानों की परवाह न करते थे। वह सब मौगली का खून पीकर ही वहाँ से हटेंगे, नहीं तो उसके हाथों मर जाएँगे।

मौगली ने देखा—वह सब कुत्ते कुंडली मार लेट रहे हैं। अब उनके चले जाने का डर न था। इसलिए मौगली ऊपरी डाल पर चढ़कर निश्चिन्त हो सो गया।

तीन-चार बजे करीब मौगली ने जागकर देखा, सभी कुत्ते वहीं पड़े थे। बिलकुल सुनसान था; लेकिन उनकी आँखें खौलनेवाले फौलाद की तरह चमक रही थीं।

धीरे-धीरे शाम हो गयी। सूर्यास्त होने लगा था और आधे घंटे में मधु-मक्खियाँ अपना काम बंद कर देंगी। उस धुँधली रोशनी में सुनक भी ठीक से नहीं लड़ सकते।

८३. याप का पत्थर का सिक्का

निम्नलिखित चित्र में दिखाई देनेवाला रथ का पहिया नहीं। याप टापू के निवासियों का एक पत्थर का सिक्का है! १२ फुट व्यासवाले इस सिक्के को कोई हिला नहीं सकता। यह सार्वजनिक संपत्ति है। ये सिक्के याप टापू में तैयार नहीं होते, पलाव टापू में तैयार होकर याप में आते हैं। इन टापुओं को कोरोलाइन टापू कहते हैं। ये प्रशांत महासागर में हैं।

Photo by P. V. Subramanyam

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'परदेसी डार फूल चुन रहे!'

प्रेषक:
भरतवर्मा - कानपुर